चन्दामामा
जून १९७५

Photo by: M. DUDHEDIYA

SELLER

मैं गंदे पैरों से
भला प्लूटो
को अन्दर
कैसे लाता?
HT-HSI 6124 R
अन्तर्राष्ट्रीय गुणमान के
अनुरूप निर्मित सैनेटरीवेयर
और वॉल टाइल
VITREOUS
हिन्दुस्तान सैनेटरीवेयर
एण्ड इण्डस्ट्रीज़ लिमिटेड
२ वेलेसली प्लेस, कलकत्ता ७०००01
सोमानी-पिलकिंगटन्स लिमिटेड
कसार, रोहतक, हरियाना
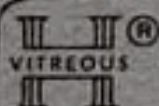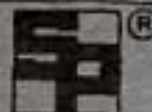
चन्दामामा

संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'

इस मह़ीने की बेताल कथा 'राजयोग' ज्योतिष पर आधारित है।

इस संसार में मनुष्य का मूल्य धन के आधार पर आंका जाता है, मगर कोई इस बात पर ध्यान नहीं देता कि उसने धन कैसे कमाया है! दुनिया केवल यही मानती है कि धन कमाने वाला व्यक्ति ही क़ाबिल आदमी है। उसी का सत्कार होता है। मगर कुछ लोग धन कमाने की क़ाबिलिबत रखते हुए भी सत्कारों की परवाह नहीं करते। सच्चे अर्थों में वे ही क़ाबिल होते हैं।

वर्ष : २७ जून १९७५ अंक : १२

मित्र-भेद

[२३]

नागकुमार की कहानी

राजगृह में देवशर्मा नामक एक ब्राह्मण था। उन्हें कोई संतान न थी, इसलिए देवशर्मा की पत्नी जब कभी दूसरों के बच्चों को देखती, तब विलाप कर उठती। देवशर्मा अपनी पत्नी को अपने प्राणों से अधिक प्यार करता था। एक दिन उसने अपनी पत्नी को समझाया—"प्यारी, अब तुम न रोओ। मैं पुत्रकामेष्टि करूँगा। तब कोई न कोई देवता प्रत्यक्ष होकर कहेगा—हे ब्राह्मण! एक सुंदर, दीर्घायु तथा भाग्यशाली पुत्र तुम्हें पैदा होगा।"

ये बातें सुन ब्राह्मण की पत्नी परमानंदित हो बोल उठी—"तथास्तु!"

देवशर्मा ने पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। उसकी पत्नी गर्भवती हुई। 'पुत्र पैदा होगा', इस विचार से उस गृहिणी का मन उछल पड़ा। आखिर उसने पुत्र के बदले एक सर्प का जन्म दिया।

सर्प को देखते ही वहाँ पर इकट्ठी हुई गृहिणियों ने कहा—"छीः छीः! इसे दूर फेंक दो।" मगर देवशर्मा की पत्नी ने सर्प को नहीं फेंका। उसको प्यार से अपनी गोद में लिया। नहलाकर एक साफ़-सुथरे नये बर्तन में रखकर रोज उसे दूध व मक्खन देती गई।

कई बर्ष बीत गये। एक दिन पड़ोसी घर के युवक का विवाह हुआ। इसे देख देवशर्मा की पत्नी ने अपने पति से कहा—"आप तो कभी मेरी फिक्र नहीं करते। हमारे पुत्र की शादी की बात आप ने सोची तक नहीं।"

अंतिम पृष्ठ का चित्र

अपनी पत्नी की आँखों में आँसू देख समझाते हुए देवशर्मा बोला—"पगली! सर्प को कन्या कौन देगा? पाताल में जाकर वासुकी से प्रार्थना करनी होगी कि एक नागकन्या दे, इसके सिवा कोई दूसरा उपाय नहीं है।"

ये बातें सुनकर देवशर्मा की पत्नी फूट-फूटकर रो पड़ी। इससे देवशर्मा का हृदय द्रवीभूत हो उठा। वह राह-खर्च के निमित्त आवश्यक पदार्थ लेकर नागकुमार की वधू की खोज में चल पड़ा।

कई महीनों के बाद देवशर्मा दूर पर स्थित कुट्कुटम नामक नगर पहुँचा। वहाँ पर उसके एक संपन्न मित्र एवं रिश्तेदार भी था, उसी के घर पहुँचा। स्नान करने के पश्चात भोजन करके उस रात को वह वहीं पर सोया। दूसरे दिन प्रातःकाल जब वह फिर से रवाना होने लगा तब उसके मित्र ने पूछा—"भाई, तुम ने यह नहीं बताया कि यहाँ पर तुम किस काम से आये हो और कहाँ जा रहे हो?"

"मैं अपने पुत्र के लिए वधू की खोज में आया हूँ।" देवशर्मा ने जवाब दिया।

"तब तो मेरी रूपवती पुत्री के साथ अपने पुत्र का विवाह क्यों नहीं करते? हम एक दूसरे के मित्र और रिश्तेदार भी

हैं। हम समधी बन जायेंगे।" मित्र ने कहा।

देवशर्मा ने बड़ी प्रसन्नता के साथ अपने मित्र के प्रस्ताव को स्वीकार किया। वधू तथा उसके दास-दासियों को भी साथ ले अपने नगर को लौट आया।

वधू की असाधारण सुंदरता को देख लोगों की भीड़ इसलिए भी लग गई कि ऐसी रमणी का विवाह एक सर्प के साथ किया जा रहा है। उस युवती को देखते सब के मन में दया आ गई। उन लोगों ने उस युवती के परिवारवालों से कहा—"जो लोग अपने को धर्म का पालन करनेवाले बताते हैं, ऐसे सज्जन व्यक्ति रत्न जैसी

इस कन्या का विवाह इस कमबख्त सर्प के साथ करने जा रहे हैं, यह कैसा न्याय है?" दास-दासियों ने तत्काल यह दारुण समाचार वधू को दिया।

वहाँ पर इकट्ठे हुए जो बुद्धिमान तथा बुजुर्ग थे, वे चिल्ला उठे–"इस कन्या को इस सर्प की पत्नी होने से बचाइए।"

सारी बातें सुनकर उस कन्या ने कहा– "अब आप लोग शांत हो जाइए। बुजुर्गों का ही कहना है कि राजा एक बार कोई आदेश देते हैं, तो उसे वापस नहीं लेते हैं, सज्जन लोग वादा करते हैं, तो उससे मुकरते नहीं, इसी प्रकार कन्यादान केवल एक ही बार होता है। ईश्वर का जो निर्णय था, वह होकर ही रहेगा। ललाट की रेखा को कोई बदल नहीं सकता। स्वयं देवता भी पुष्पक की मृत्यु को रोक न पाये!"

"पुष्पक की वह कैसी कहानी है?" इकट्ठी भीड़ ने पूछा।

वधू ने उन्हें यों कहानी सुनाई :

पुष्पक की कथा

इंद्र के यहाँ अनेक शास्त्रों तथा विद्याओं में प्रवीण एक सुंदर तोता था। उसका नाम पुष्पक था, एक बार वह इंद्र के हाथ पर बैठकर वार्ता कर रहा था, तब यमराज को देख भाग गया। देवताओं ने पुष्पक से पूछा कि तुम ने ऐसा क्यों किया? "समस्त प्राणियों की हानि करनेवाले को देख मैं भाग न जाऊँगा तो करूँगा ही क्या?" पुष्पक ने जवाब दिया।

इस पर देवताओं ने यमराज से कहा– "आप पुष्पक को मत मारिये।"

"मैं काल का सेवक हूँ। मेरे हाथ में कोई अधिकार नहीं है। आप लोग काल से जाकर निवेदन कीजिए।" यमराज ने उत्तर दिया।

सब ने जाकर काल से पूछा। काल ने मृत्यु से पूछने को कहा। देवताओं ने जाकर मृत्यु से पूछा। मगर मृत्यु को देखते ही पुष्पक ने अपने प्राण त्याग दिये।

विचित्र जुड़वाँ

[११]

[जुड़वें भाइयों ने जान लिया कि राक्षस के भूगर्भगृह में भस्म तथा अंजन काम न दे सकेंगे। राक्षस ने जादुई तौलिया तथा अन्य वस्तुएँ लेकर जुड़वें भाइयों को खाना खिलाया और उन्हें शिलाप्रतिमाओं के रूप में बदल दिया। उधर महाराजा दानशील तथा उसकी रानी अपनी जुड़वाँ पुत्रियों का पता न लगने पर चिंता में डूब गये। बाद–]

राक्षस के हाथों में जुड़वें भाइयों का फंस जाना तथा राक्षस के भाई के द्वारा उन्हें अपने साथ ले जाना, ये सब हंसों के रूप में स्थित राजकुमारियाँ देखती रहीं। राजकुमारियों ने एक और महत्वपूर्ण बात देखी जिसे राक्षसों ने न देखा, वह यह कि उदयन ने डिबिया निकालकर सफ़ेद भस्म अपने ऊपर छिड़काना चाहा, तभी राक्षस वहाँ पर आ पहुंचा। उस जल्दबाजी में उदयन भस्म को अपने ऊपर छिड़का न पाया, मगर डिबिया नीचे गिर गई। उसे उठाने का मौक़ा जुड़वें भाइयों को न मिला। परिणाम स्वरूप जुड़वें भाई डिबिया को वहीं पर छोड़ चले गये।

राक्षसों के चले जाने पर राजकुमारियाँ तड़ाग में से बाहर आईं, डिबिया की खोज की, पर वह नहीं मिली।

राजकुमारियां विस्मय में आ गईं। इस पर सुहासिनी ने कहा–"यह क्या? बड़ा ही अजीब मालूम होता है! उस डिबिया को हम तीनों देखती ही रहीं, मगर वह कैसे गायब हो गई? यहीं कहीं होगी, चलो, ढूंढ़ ले।"

तीनों ने आस-पास में डिबिया की खोज करना शुरू किया, काफ़ी देर तक ढूंढ़ने के बाद आखिर दूर पर वह डिबिया उन्हें दिखाई दी। अब उनके सामने यह सवाल पैदा हुआ कि डिबिया को कहां पर छिपावे? अंत में तड़ाग के किनारे एक जगह एक छोटा-सा गड्ढा खोदकर उसे गाड़ दिया।

उस दिन से तीनों राजकुमारियां जुड़वें भाइयों को बचाने का उपाय सोचने लगीं। एक दिन सुकेशिनी ने उत्साह में आकर कहा–"मुझे एक उपाय सूझ रहा है। क्या बता दूं?"

सुभाषिणी तथा सुहासिनी ने विस्मय में आकर पूछा–"वह कैसा उपाय है?"

सुकेशिनी ने उत्तर में यों कहा–"हमें किसी भी उपाय से राक्षस को भूगर्भगृह से बाहर लाना होगा। मेरे ख्याल से यों करना ज्यादा उचित होगा। हम सब उसके यहां जाकर नृत्य करके उसको प्रसन्न करेंगी। उसको अपने विश्वास में लेकर हम में से कोई एक मंत्र-जल साथ ले जाएँगी और उन युवकों की शिलाप्रतिमाओं पर छिड़ककर उन्हें पूर्व रूप प्रदान करेंगी। राक्षस की आंखों से बचकर हम में से एक वहीं रहकर यह काम साध सकती हैं। इसके बाद के कार्यक्रम के संबंध में हम उन्हीं युवकों की सलाह ले सकती हैं।"

इस पर सुहासिनी ने अपना मत व्यक्त किया–"वह कोई बुद्धू नहीं कि हमारे जाल में फंस जाय! यदि हम किसी प्रकार उसको चकमा देकर वहां से बाहर लायेंगी भी तो क्या उसके महल में ही रहकर उसकी आंखों में धूल झोंककर यह काय

संपन्न करना आसान काम थोड़े ही है? यदि हम भी इस प्रयत्न में फंस जाएंगी तो हमारी खबर तथा उन युवकों का समाचार भी राजमहल तक पहुँच नहीं जाएगा। तुम्हारा उपाय तो अच्छा ज़रूर है, मगर उसे आचरण में लाना बड़ा मुश्किल मालूम होता है!"

सुकेशिनी ने सुहासिनी की बात काटते हुए कहा-"यदि हम इतनी भी हिम्मत न कर पायेंगी तो कोई कार्य साध न सकेंगी! यह सोचकर कि हम खतरे में फंस जाएंगी, क्या हम उनकी रक्षा किये बिना ही उनके भाग्य पर छोड़ बैठेंगी?" इस पर सुहासिनी तथा सुभाषिणी ने भी अपनी सम्मति दी।

दूसरे दिन तालाब में रहनेवाले सभी हंस किनारे पर आये। किनारे पर आते ही उन्हें मानव की आकृतियाँ प्राप्त हो गईं। जुड़वीं राजकुमारियों की भांति वे सब राक्षस के हाथों में फंसे हुए हैं, उनमें लड़कियाँ भी हैं और लड़के भी।

सुहासिनी ने लड़कों को तड़ाग में चले जाने का आदेश दिया। इस पर वे सब पानी में चले गये। अब केवल लड़कियाँ रह गईं। वे सब उद्यान में फूल चुनकर गीत गाते राक्षस के महल की ओर बढ़ीं।
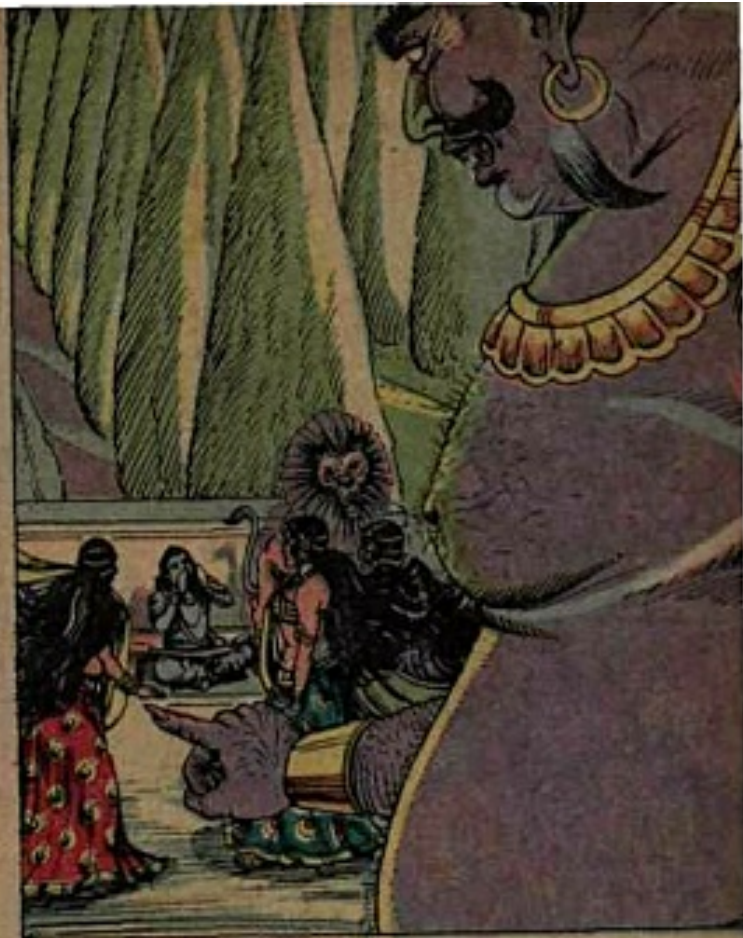
यह आवाज सुनकर राक्षस लड़कियों के सामने आ पहुँचा और मुस्कुराते हुए पूछा-"यह क्या? तुम सब कहाँ चल पड़ीं? मुझ पर हमला करने तो नहीं आ रही हों?"

सब से आगे चलनेवाली सुकेशिनी ने कहा-"तुम जैसे बलवान पर हमला करना किसके लिए संभव है? हम यह देखने के लिए चली आईं कि हाल ही में जो लड़के तुम्हारे हाथों में पड़ गये, उनका क्या हाल है? हम भी तो देख लें!"

इस पर राक्षस ठठाकर हँस पड़ा और बोला-"उनका हाल वही होगा जो इसके पहले पकड़ में आये हुए लोगों का हो

गया है! क्या तुम उन्हें देखना चाहती हो?" इन शब्दों के साथ उन लड़कियों को साथ ले महल में गया और जुड़वें भाइयों की शिलाप्रतिमाओं की ओर संकेत किया। उन प्रतिमाओं को देखते हुए सुकेशिनी बोली—"वाह, तुम्हारी नौकरी क्या खूब है? लेकिन मेरी एक शंका का समाधान तो करो। यों तो हम सब मिल-जुलकर रहते हैं, मगर इस क़ैद से ऊब गये हैं, हम सोचती हैं कि तुम्हारा भाई हम सब की जो बलि देना चाहता है, वह जल्दी हो जाय तो क्या ही अच्छा हो? ऐसी हालत में तुम अकेले, इन शिलाप्रतिमाओं के बीच बिना थकान और आराम के कई सालों से तुम पहरा कैसे दे रहे हो?"

"तुम लोग सोचती हो कि मैं ऊब नहीं गया हूं? पर बात ऐसी नहीं, लेकिन मैं अगर इस स्थान को छोड़कर कहीं चला गया तो तुम लोगों की बलि देने के पहले मेरा भाई मेरा वध कर बैठेगा। मैं भी लाचार होकर अपने दिन काटता हूं।" राक्षस ने अपनी व्यथा प्रकट की।

"तुम आखिर कितनी देर इस प्रकार पहरा दोगे? थोड़ी देर के लिए हमारे साथ चलकर अपना मन क्यों नहीं बहलाते? हम खेलेंगी, गायेंगी, तुम्हारा मन भी खुश होगा। हमारा भी समय कट जाएगा। चलो, तमाशा देख लो!" सुकेशिनी ने राक्षस के मन में उत्साह भर दिया।

"बाप रे बाप! इस महल को छोड़कर बाहर आ जाऊं? हाथी जैसे बलवान मेरे द्वारा पहरा देते रहने पर भी मेरी आंखों में धूल झोंककर ये लड़के महल में घुस आये हैं? ऐसी हालत में मैं इस महल को छोड़ दूं तो न मालूम और क्या क्या होगा?" राक्षस ने अपनी शंका व्यक्त की।

"यह तो तुम्हारा भ्रम है! असल में यहां पर आयेगा ही कौन? यदि आ भी गया तो तुम्हारे हाथों में फंसे बिना

जाएगा ही कहाँ? अच्छा, हम ऐसा करेंगी कि हम में से कोई न कोई तुम्हारी जगह पहरा देती रहेंगी। तुम थोड़ी देर अपना मन बहलाव करके अपने काम पर चले जाओ।" सुकेशिनी ने समझाया। यह बात राक्षस को भी पसंद आ गई।

"तब तो मेरी जगह पहरा कौन देगा?" राक्षस ने पूछा।

सुकेशिनी ने सुहासिनी की आँखों में देखकर कहा—"और कौन? मेरी बड़ी बहन तो है!" इसके बाद सुहासिनी को उस महल में छोड़कर वे सब तड़ाग की ओर चल पड़ीं।

तड़ाग के किनारे राक्षस को एक जगह बिठाकर सब ने उसको घेर लिया और नाचने लगीं। उनके खेल तथा गीतों पर तन्मय हो राक्षस ने कहा—"रोज इस प्रकार वक़्त बिता दे तो बड़ा अच्छा होगा।"

उस दिन से रोज कोई न कोई महल का पहरा देती और राक्षस खेल-गीतों में अपना मनोरंजन कर लेता। इस प्रकार चार दिन बीत गये। इनके पूर्व राक्षस को अपना महल छोड़ने में डर लगता था। अब वह खुद राजकुमारियों के पास चला आता और उन्हें बुलाकर खेल-गीतों में डूब जाता। सुकेशिनी को लगा कि अब उसकी चाल चल निकलेगी।

अब समस्या यह थी कि जुड़वें भाइयों की शिलाप्रतिमाओं को मंत्र-जल द्वारा

ही मनुष्यों के रूप में बदला जा सकता था। जल लाने के लिए कोई न कोई वस्तु चाहिए। अगर कहीं से कोई पात्र लाकर उसमें जल ले जाना चाहे तो राक्षस के द्वारा पकड़े जाने का डर था। तो फिर क्या किया जाय? वह किसी विचार में डूब गई, मगर सुकेशिनी जैसी बुद्धिमती के लिए यह कौन बड़ा कार्य था?

दूसरे दिन राक्षस को बुला ले आने के लिए जाने के पूर्व सुकेशिनी उद्यान में गई, अपनी साड़ी के आंचल को मंत्र-जल में भिगोया, दूसरे छोर को तालाब के पानी में भिगो लिया।

इसके बाद राक्षस के पास जाकर बोली–"आज पहरा देने की बारी मेरी है। मेरे बिना हमारी सखियों के गीत व खेल तुम्हें पसंद आये या नहीं, मुझे बताना होगा।"

"अच्छी बात है, जरूर बताऊँगा।" इन शब्दों के साथ राक्षस तत्काल तालाब की ओर चल पड़ा। राक्षस को अपनी ओर आते देख तड़ाग की राजकुमारियाँ खेल व गीतों में निमग्न हो गई।

राक्षस के जाते ही सुकेशिनी ने जुड़वें भाइयों की शिलाप्रतिमाओं पर साड़ी के आंचल में लाये जल को निछोड़ दिया। दूसरे ही क्षण उन्हें पूर्व रूप प्राप्त हो गये। उन लोगों ने विस्मय में आकर पूछा–"यह क्या? तुम यहाँ पर कैसे आ गई? राक्षस कहाँ?"

इस पर सुकेशिनी ने अपनी योजना बताई–"राक्षस जब खेल-गीतों में डूबा हुआ होगा, तब मौक़ा पाकर उसका वध करना है। अब तुम लोग कोई उपाय सोच लो।" इन शब्दों के साथ जुड़वें भाइयों को प्रेरणा दी।

"यह कैसे मुमकिन होगा? हम तो भस्म तक खो बैठे हैं?" उदयन ने शंका प्रकट की।

सुकेशिनी भस्म की बात भूल गई थी। उदयन के याद दिलाने पर बोली–

"हां, तब तक एक काम करेंगे! आज तुम लोगों को फिर से शिलाप्रतिमाओं में बदलकर चली जाऊंगी। कल में अपने साथ भस्म ले आऊंगी।"

भस्म की बात सुनकर जुड़वें भाई प्रसन्न हो उठे। तब सुकेशिती ने तालाब के पानी से सिंचे आंचल को निछोड़कर वह जल जुड़वें भाइयों के मुंह में डाल दिया। इस पर वे फिर से शिला प्रतिमाएँ बन गये।

इतने में राक्षस वहां पर पहुंच कर बोला–"तुम्हारे रहने से ज्यादा अच्छा होता है। आज का कार्यक्रम बड़ा फीका रहा।"

"सच कहते हो या मजाक़ करते हो? तब तो मैं कल वहीं रहूंगी और मेरी बड़ी बहन को ग्रहां भेजूंगी।" इन शब्दों के साथ वह तालाब के पास चली गई।

इसके बाद तीनों राजकुमारियां भस्म लाने के लिए गई, गड्ढा खोद कर देखा तो डिबिया दिखाई नहीं दी। उनकी समझ में न आया कि क्या किया जाय! तब सुकेशिनी ने उन्हें समझाया–"चिंता करते बैठे रहने से काम नहीं चलेगा! कल पहरा देने के लिए तुम चली जाओ। उन युवकों से कह दो कि डिबिया खो गई है। इसके बाद वे जैसा सुझायेंगे, वैसा करेंगी!" इन शब्दों के साथ सुभाषिणी को भेजा।

सुभाषिणी भी मंत्रजल तथा तालाब के जल से अपनी साड़ी के आंचलों को भिगोकर महल में पहरा देने गई और राक्षस को तालाब के पास भेज दिया। राक्षस के जाने पर आंचल के जल को निछोड़ कर शिला प्रतिमाओं पर डाल दिया। मगर उस जल्दबाजी में सुभाषिणी ने मंत्रजल से सिंचित साड़ी के छोर को निछोड़ने के बदले तड़ाग के जल से सिंचे छोर को निछोड़ दिया जिससे शिलाप्रतिमओं को उनके पूर्व रूप प्राप्त नहीं हुए। "उफ़! कैसी भूल हो गई!" यों सोचते

उसने इस बार मंत्र जल को निछोड़ा। दूसरे ही क्षण तीनों जुड़वें भाई अपने असली रूप में प्रत्यक्ष हुए।

सुभाषिणी ने उन्हें भस्म के गायब हो जाने का समाचार सुनाया। साथ ही यह भी बताया कि जल के निछोड़ने में उसने कैसी भूल की।

उदयन ने निराश में आकर कहा— "इन घटनाओं को देखते मुझे लगता है कि हम जो भी कार्य करना चाहते हैं, सफल नहीं होने का है। वरना पग-पग पर ये अड़चनें क्यों उपस्थित होंगी?"

निशीथ ने उदयन की बातों को काटते हुए कहा—"सफल क्यों नहीं होगा? भगवान हमारी परीक्षा ले रहे हैं! इसके लिए हमें घबराने की कोई जरूरत नहीं!"

"अच्छी बात है! मगर राक्षस के लौटने के पहले हमें यहाँ से भाग जाना होगा! वरना........." वह कुछ कहने को हुआ।

सुभाषिणी ने उसको बीच में ही रोकते हुए कहा—"मुझे तो एक उपाय सूझ रहा है! यहाँ पर जो अन्य प्रतिमाएँ हैं, उन में से तीन लाकर तुम लोगों की जगह रखेंगे। राक्षस हाथी जैसे बलवान जरूर है। मगर उसकी खोपड़ी में गोबर भरा हुआ है। इसलिए प्रतिमाओं के बदलने की बात वह भूल से भी सही जान न सकेगा। तुम लोग महल के बाहर उस झाड़ी की ओट में छिप जाओ। राक्षस के महल में घुसते ही तुम लोग हमारे पास चले आओ। फिर हम आगे की बात सोच लेंगे।"

सुभाषिणी की यह सलाह सब को पसंद आ गई। सब ने मिलकर तीन शिला प्रतिमाओं को लाकर अपनी जगह रख दिया, तब महल से बाहर आकर एक झाड़ी के पीछे छुप गये।

थोड़ी देर बाद राक्षस लौट आया और सुभाषिणी को छुट्टी दी। तब सुभाषिणी जुड़वें भाइयों के निकट गई, उनके साथ मिलकर तालाब के पास पहुंची।

(और है)

भाग्ययोग

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, भाग्य को झूठा साबित करनेवाला प्रयत्न जैसे निरर्थक होता है, वैसे ही उसे सत्य साबित करने का प्रयत्न भी। इसके प्रमाण स्वरूप में तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ। तुम जैसे पुरुषार्थ करनेवाला दूसरा न होगा, इसलिए श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीन काल में चन्दनपुर पर राजा नंदनवर्मा शासन करता था। बहुत समय उपरांत उसे एक पुत्र हुआ। राजा ने तत्काल अपने दरबारी ज्योतिषी को बुलवा कर राजकुमार की जन्मकुंडली तैयार करने का आदेश दिया।

बेताल कथाएं

ज्योतिषी ने घर लौट कर देखा कि उस की पत्नी ने भी एक पुत्र का जन्म दिया है। ज्योतिषी ने राजकुमार की जन्म कुंडली के साथ अपने पुत्र की जन्म कुंडली भी बनाई। इस के बाद दोनों जन्मकुंडलियों का परिशीलन कर वह विस्मय में आ गया।

क्यों कि बीस वर्ष की अवस्था में उसके पुत्र के लिए जहाँ राजयोग है, वहाँ राजकुमार के लिए उसी अवस्था में प्राणों के लिए दो खतरे हैं।

ज्योतिषी ने सोचा कि राजा को वास्तविक समाचार बता दे, लेकिन सोचने पर उसे लगा कि सच्ची बात बताना उचित न होगा। अपने पुत्र के राजयोग तथा राजकुमार के प्राणों के खतरों के साथ सीधा संबंध है। यह समाचार मालूम होने पर राजा अपने पुत्र के दुष्ट ग्रहों की शांति करवाकर उसके दोष को दूर कर सकते हैं; अथवा बीस वर्ष की आयु के पूर्व ही पट्टाभिषेक कर सकते हैं।

यों सोचकर ज्योतिषी ने राजा से असत्य बताने का निश्चय किया, राजा की सेवा में पहुँच कर बोला-"महाराज, युवराज की जन्मकुंडली अद्‌भुत है। मगर उसकी बीस वर्ष की आयु पूरा होने के बाद ही उसका राज्याभिषेक कीजिए, इस से उसके अरिष्ट दूर हो सकते हैं।"

इसके उपरांत राजकुमार का नाम करण आनंदवर्मा तथा ज्योतिषी के पुत्र का नाम सुंदरसेन किया गया। दोनों एक ही गुरु के यहाँ शिक्षा प्राप्त कर बड़े भी हो गये हैं। दोनों बीस वर्ष की आयु के हो गये।

एक दिन ज्योतिषी के पुत्र सुंदरसेन ने अपने पिता से कहा-"ज्योतिष शास्त्र में मुझे और अधिक पांडित्य प्राप्त करने की इच्छा है; इसलिए मैं थोड़े दिन देशाटन पर जाना चाहता हूँ।"

"तुम्हें तो छे महीने के अन्दर लौटना होगा, ऐसी बात हो तो चले जाओ, वरना

नहीं।" ज्योतिषी ने अपने पुत्र को समझाया। सुन्दरसेन इस शर्त को स्वीकार करके घर से चल पड़ा।

छे माह बीत गये, मगर सुंदरसेन लौटकर नहीं आया। ज्योतिषी घबरा गया। पांच महीने और बीत गये, तब भी सुंदरसेन नहीं लौटा। राजकुमार आनंदवर्मा को किसी ख़तरे का सामना करना न पड़ा। बल्कि राजा नंदनवर्मा ने घोषणा की कि दो महीने बाद राजकुमार का राज्याभिषेक किया जाएगा।

ज्योतिषी की घबराहट बढ़ती गई। उसका ज्योतिष तो किसी भी हालत में गलत साबित नहीं हो सकता। राजकुमार आनंदवर्मा को कुछ ही दिनों में मर जाना चाहिए और उसके पुत्र सुंदरसेन को राजा बनना चाहिए। इसलिए अपने ज्योतिष को सच्चा साबित करने का प्रयत्न ज्योतिषी ने स्वयं किया। इसके वास्ते उसने एक उपाय भी सोचा।

युवराज प्रति दिन शाम के वक़्त उद्यान में जाकर एक वृक्ष के नीचे एक आसन पर बैठता है। ज्योतिषी ने एक बड़े पत्थर को रस्सी से बांध कर उसको इस तरह वृक्ष के घने पत्तों के बीच लटका दिया जिससे वह आसानी से दिखाई न दे और साथ ही रस्सी के

दूसरे छोर को दूर पर स्थित एक दूसरे पेड़ से बांध दिया।

शाम के वक़्त आनंदवर्मा उद्यान में टहलने आया और पेड़ के नीच ठीक पत्थर के सीध में बैठ गया। इसे देख ज्योतिषी ने रस्सी के दूसरे छोर को पेड़ से खोल दिया और दूर हट गया।

उसी क्षण युवराज अचानक उठ खड़ा हुआ और सामने दिखाई देनेवाले एक सुंदर फूल को सूंघने गया। युवराज के उठने के दूसरे ही क्षण धम्म से पत्थर नीचे गिर पड़ा।

आनंदवर्मा ने चौंक कर पीछे मुड़कर देखा। पेड़ के नीचे आसन पर एक बड़ा

पत्थर तथा उस से बंधी रस्सी दिखाई दी। युवराज ने भांप लिया कि उसकी हत्या करने का प्रयत्न किसी ने किया है। यह बात उसने किसी से नहीं कही।

अपने प्रयत्न को विफल देख ज्योतिषी एक दम पागल सा हो गया। उस रात को वह एक छुरी लेकर सीधे युवराज के शयन कक्ष में पहुंचा। आश्चर्य की बात थी कि उस वक़्त सभी पहरेदार गहरी नींद में हैं। ज्योतिषी ने यह अपने लिए भाग्य की बात मानी और भीतर पहुंचा। नींद का अभिनय करने वाले आनंदवर्मा की छाती में वह छुरी भोंकने को हुआ, उस वक़्त आनंदवर्मा झट उठ बैठा और ज्योतिषी की कलई थाम ली।

आनंदवर्मा ने ज्योतिषी को पहचान लिया, उसकी करनी पर आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा–"आज शाम को तुमने ही मेरा वध करने का प्रयत्न किया है न? हत्यारे को पकड़ने के वास्ते ही मैं और मेरे पहरेदार नींद का अभिनय कर रहे थे। यह तो बताओ, तुम मुझ से द्वेष क्यों करते हो?"

कंपित स्वर में ज्योतिषी ने सारा वृत्तांत राजकुमार को सुनाया।

सारा समाचार सुनकर आनंदवर्मा ने हँसकर बताया–"तब तो तुम्हारा ज्योतिष सच्छा साबित हुआ है। तुम्हारे ही द्वारा मेरे प्राणों के लिए दो खतरे पैदा हुए। अब रही तुम्हारे पुत्र के राजा बनने की बात! तुम यह क्यों सोचते हो कि वह इसी देश का राजा बने? क्या वह दूसरे देश का राजा नहीं बन सकता?"

राजकुमार का कथन सत्य साबित हुआ। देशाटन करनेवाले सुंदरसेन ने एक देश के राजा को राजद्रोहियों के दल से बचाया। वह राजा अत्यंत वृद्ध था, साथ ही उसके कोई संतान न थी। इसलिए उस राजा ने सुंदरसेन का ही स्वयं राज्याभिषेक किया। यह समाचार शीघ्र ही चन्दनपुर में

पहुँचा। सुंदरसेन इसी कारण से अपने पिता को दिये गये वचन का पालन न कर पाया।

आनंदवर्मा ने ज्योतिषी को कोई दण्ड न दिया, उल्टे उसे समझाया कि वह अपने पुत्र के पास न जावे, बल्कि इसी देश के दरबार में रहे। मगर ज्योतिषी अपनी करनी पर अत्यंत लज्जित था, इस वजह से वह अपने परिवार के साथ अपने पुत्र के पास पहुँचा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, अपनी हत्या करने का दो बार प्रयत्न करनेवाले ज्योतिषी को आनंदवर्मा ने क्यों क्षमा किया? कहा तो यह जाता है कि देवताओं के संकल्प के लिए मानव का प्रयत्न साथ देता है। मगर ज्योतिषी का प्रयत्न क्यों विफल हो गया? उसने भले ही गलत प्रयत्न किया हो; फिर भी देवताओं का निर्णय ही अमल हुआ, इसलिए क्या मानव का प्रयत्न व्यर्थ है? इन संदेहों का समाधान जानकर भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने जवाब दिया– "आनंदवर्मा ने ज्योतिषी के ज्योतिष को असाधारण मान कर ही उसको अपने दरबार में रहने का अनुरोध किया। ज्योतिषी ने आनंदवर्मा के प्रति गलत धारणा बनाई, परंतु आनंदवर्मा के प्रति उसके मन में किसी प्रकार का द्वेष नहीं है। अलवा इसके उसके हत्या-प्रयत्न भी विफल हो गये हैं, इसलिए आनंदवर्मा ने उसको क्षमा किया। इस में कोई संदेह नहीं कि आनंदवर्मा अत्यत आत्मसंयमी है। अब ज्योतिषी का मानव यत्न गलत धारणा से पूर्ण भले ही हो, व्यर्थ नहीं कह सकते। उसी प्रयत्न के फल स्वरूप आनंदवर्मा के प्राणों के लिए खतरे उत्पन्न हुए।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

बुद्धिमान मंत्री

राजा शेरसिंह महान मूर्ख था। उसका मंत्री बड़ा ही अक़्लमंद था। एक बार राज्य में भयंकर अकाल पड़ा। लोग भूखों मरने लगे। इस पर सब ने आकर राजा से निवेदन किया कि अन्न भण्डारों से अनाज कर्ज के रूप में दिला दें; मंत्री ने भी यही सलाह दी।

मगर मूर्ख राजा ने न माना। उल्टे उसने सोचा कि अनाज के यहीं रहने से लोग लूट लेंगे, अतः आदेश दिया—"मंत्री महोदय, हमारे अनाज को दूसरे टापुओं में भेजकर बेच दो।"

मंत्री ने तत्काल अनाज को समुद्र के तट पर पहुँचा दिया, थोड़े दिन बाद राजा से कहा—"महाराज, हमारे अनाज के जहाज समुद्र में डूब गये हैं।"

"हम अब कर ही क्या सकेंगे? भूख से तड़पनेवाली हमारी जनता से कह दो कि समुद्र में उतरकर उस अनाज को ले ले।" राजा ने कहा।

समुद्री तट पर रखे अनाज को मंत्री ने जनता में बाँट दिया।

क़ाबिल आदमी

एक गाँव में एक बेवा थी जिसके दो बेटे थे। जब वे बच्चे थे, तभी उनकी माँ बीमार पड़ी। यह बात मालूम होते ही बेवा का भाई सूरजसिंह उसे देखने आया। बेवा अपने पुत्रों को अपने बड़े भाई के हाथ सौंपकर निश्चिंत मर गई।

सूरज सिंह ने उन बच्चों को अपने घर ले जाकर पाला-पोसा और बड़ा किया। मगर वे दोनों पढ़ने में कच्चे थे। सूरज सिंह की समझ में न आया कि क्या किया जाय!

सूरजसिंह के मीनाक्षी नामक एक मात्र लड़की थी। वह बड़ी ख़ूबसूरत थी। दोनों भाई उस लड़की के साथ शादी करना चाहते थे। यह बात उन्होंने सूरजसिंह से बताई। सूरजसिंह सोच में पड़ गया।

सूरजसिंह ने आखिर उन्हें समझाया– "तुम दोनों किसी भी विद्या में प्रवीण नहीं हो। मीनाक्षी का तुम दोनों में किसी एक के साथ विवाह करने का मतलब उसका गला घोंटने के बराबर है। अलावा इसके अभी उसकी शादी की कोई जल्दी भी नहीं है। मैं तुम्हें चार साल की मोहलत देता हूँ। इस बीच तुम दोनों क़ाबिल आदमी बन जाने का प्रयत्न करो। तुम दोनों में जो ज्यादा क़ाबिल बनेगा, मैं उसी के साथ मीनाक्षी का विवाह करूँगा।"

यह बात सुनने पर दोनों भाई क़ाबिलियत पाने के विचार से घर से निकल पड़े।

बड़ा भाई रामभजन कई देश घूमकर आखिर विद्यापुर नामक गाँव में पहुँचा। उसने एक मंदिर के पास जाकर देखा जहाँ पुराण पठन चल रहा था। एक

महेश प्रताप सिंह

ब्राह्मण एक ऊँची वेदिका पर बैठकर मधुर कंठ से श्लोक गाकर उनका अर्थ समझा रहा था। उसके चारों तरफ़ बैठी जनता बड़े ही ध्यान से पुराण श्रवण कर रही थी। रामभजन ने भी सब के साथ बैठकर अंत तक पुराण सुना। वह पुराण पठन से अत्यंत प्रभावित हुआ।

पुराण-पठन जब समाप्त हुआ, तब ब्राह्मण उठकर चलने को हुआ। रामभजन सिंह भी उसके पीछे उसके घर तक पहुँचा और ब्राह्मण के चरण पकड़कर वह विद्या सिखाने की मिन्नत की।

ब्राह्मण ने रामभजन के हाथ पकड़ कर ऊपर उठाया और बड़े ही प्रेम से कहा—"बेटा, यदि तुम सचमुच पुराण पठन सीखना चाहे तो तुम्हें सिखाने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

उस दिन से रामभजन बड़ी श्रद्धा एवं भक्ति के साथ अपने गुरु की सेवा-शुश्रूषा करते विद्याभ्यास करने लगा। अनेक दिन बाद वह भी एक पंडित बना।

इस बीच छोटा भाई रंगदास कई प्रदेश घूमकर रामापुर पहुँचा और एक सराय के चबूतरे पर बैठ गया। उसी वक़्त एक बुज़ुर्ग उस सराय के सामने आ पहुँचा। उसको देखते ही सराय के मालिक के साथ सब लोग उठ खड़े हुए और उसे प्रणाम किया। वह बुज़ुर्ग उन लोगों की ओर कोई विशेष ध्यान दिये बिना ठाठ से आगे बढ़ा।

रंगदास की समझ में न आया कि आखिर वह व्यक्ति कौन है? उसने विस्मय में आकर सराय के मालिक से पूछा कि वह बुज़ुर्ग कौन है?

"वह बुज़ुर्ग और कोई नहीं, इस गाँव का सब से बड़ा धनी है। उसके पास इतना धन है कि तीस पीढ़ियों तक आराम से बैठे-बैठे खाते जायें, तब भी उसका धन नहीं घटेगा। इसलिए सब लोग उनका आदर करते हैं।" सराय के मालिक ने जवाब दिया।

रंगदास को धन का मूल्य मालूम हुआ। उसने सोचा कि उस धनी के पास नौकरी करते धन कमाने की तरक़ीब भी सीखी जा सकती है।

फिर क्या था, वह तेज़ी के साथ उस धनी के पीछे चला। उसके नौकरों से मीठी बातें करके उसे भी एक नौकरी दिलाने की मिन्नत की। उन लोगों ने रंगदास को भी धनी के यहाँ नौकरी दिलाई।

रंगदास धनी के यहाँ नौकरी में लग गया। थोड़े दिन बाद उसने जान लिया कि उसे जो तनख्वाह मिलती है, उसमें एक कौड़ी भी बचाना मुमकिन नहीं है। क्योंकि अमीर अव्वल दर्जे का कंजूस था। अलावा इसके नौकरों ने उसे बताया कि धन कमाने के लिए वह हर प्रकार का धोखा-दगा देता है।

सूरजसिंह ने जो मियाद रखी, वह पूरी होने को थी, मगर रंगदास ने कोई कार्य नहीं साधा। एक दिन रात को अमीर के घर में सब लोग बेफ़िक्र सो रहे थे। उस वक़्त कोई आहट पाकर रंगदास की आँखें खुल गईं। वह लाठी लेकर आवाज़ की दिशा में चल पड़ा।

दो चोरों ने सेंध लगाकर घर के अन्दर प्रवेश किया, वे धन व सोने के गहने चुराकर भागने को तैयार थे। मगर अचानक वे रंगदास तथा उसके हाथ में लाठी देख डर गये। रंगदास ने चोरों

को मारने के लिए लाठी उठाई, तब चोरों में से एक ने कांपते हुए स्वर में कहा–"हमें मत मारो। चुराये गये धन में से आधा तुम्हें देंगे। हमको जाने दो।"

रंगदास शांत हो पल भर सोचता रहा। उसे लगा कि चोरी के माल में से हिस्सा लेना अपराध है। मगर वही धन कमाने के लिए उसका मालिक कितने ही लोगों को धोखा नहीं दे रहा है? उसने आखिर चोरों की शर्त को मान लिया। चोर उसे चोरी के माल में से आधा हिस्सा देकर अपने रास्ते चले गये। रंगदास ने अपने हिस्से का धन बड़ी सावधानी से छिपा लिया।

दूसरे दिन जब अमीर को चोरी का पता लगा, तब सब नौकरों को बुला कर डांटा, गालियां भी दीं। चोरों की खोज हुई, पर उनका कहीं पता न लगा।

इसके कुछ दिन बाद रंगदास नौकरी छोड़कर अपने हिस्से के धन के साथ गांव पहुंचा। उसी वक्त रामभजन भी लौट आया।

दोनों में परिवर्तन देख सूरजसिंह बड़ा खुश हुआ। रामभजन ने एक पोथी निकाली, उसमें से थोड़े श्लोक पढ़कर उनका अर्थ, विशेष अर्थ समझाया और उनकी व्यख्या भी की। सूरजसिंह उसकी विद्वत्ता पर बहुत ही प्रभावित और चकित भी हुआ।

इसके बाद रंगदास ने अपनी पोटली खोलकर सारा धन फ़र्श पर गिरा दिया। उस धन को देखते ही सूरजसिंह की आँखें चकरा गईं। बेचारे उसने इतना सारा धन एक साथ कभी देखा तक न था। इसलिए खुशी के मारे रंगदास को गले लगया, अपनी पुत्री के साथ उसका विवाह किया।

रामभजन सिंह इस घटना को देख मन ही मन मुस्कुराया। अपने छोटे भाई का विवाह किया, तब अपनी विद्या का आश्रय ढूंढ़ने के लिए घर से चल पड़ा।

बेतुकी सलाहें

रामदीन अपने बाप-दादों के ज़माने की एक झोंपड़ी का मालिक था। उससे सटकर एक विशाल पिछवाड़ा था। उसने अपने पिछवाड़े में केले के कल्ले रोप दिये। केले का बगीचा खूब बढ़ा, हरा-भरा तथा देखने में मनमोहक था।

एक दिन सवेरे रामदीन केले के बगीचे में पानी सींच रहा था। तभी गाड़ी में से जमीन्दार की पत्नी उतर पड़ी, रामदीन कीचड़ से सने अपने हाथों को साफ़ कर जमीन्दार की पत्नी के सामने आ खड़ा हुआ।

जमीन्दार की पत्नी ने रामदीन का नाम पूछकर जान लिया, तब कहा– "रामदीन, तुम अपने पिछवाड़े के साथ अपनी झोंपड़ी को बेच दोगे?"

रामदीन विस्मय में आ गया। वह तुरंत कोई उत्तर न दे पाया। वह समझ न पाया कि जमीन्दार की पत्नी उसकी पुरानी झोंपड़ी लेकर करेंगी ही क्या?

"पैसे की तुम चिंता न करो। मैं तुम्हें पाँच सौ रुपये दूंगी।"

रामदीन अपने कानों पर यक़ीन नहीं कर पाया। क्योंकि उस झोंपड़ी के लिए कोई दो सौ रुपयों से ज्यादा न देगा।

रामदीन को मौन देख जमीन्दार की पत्नी ने सोचा, वह क़ीमत पर्याप्त नहीं है, इसलिए वह बोली–"अच्छी बात है! साढ़े सात सौ रुपये देती हूं। अब मोल-भाव मत करो।"

रामदीन को लगा कि वह बेहोश होता जा रहा है। साढ़े सात सौ रुपये! वह इस विचार में खो गया कि इतनी पूंजी लगाकर वह कोई भी व्यापार कर सकता है।

इस बार भी रामदीन को मौन देख जमीन्दार की पत्नी खीझकर बोली–"मैं

मीता राय

अंतिम बात कह रही हूँ–एक हज़ार रुपये दूंगी! झोंपड़ी बेचते हो या नहीं?"

रामदीन ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया और कहा–"शाम के अंदर हम झोंपड़ी खाली कर देंगे। शाम को आप इस पर क़ब्ज़ा कर सकती हैं।"

"शाम को मैं अपने नौकर के द्वारा रुपये भेज दूंगी!" यों कहकर जमीन्दार की पत्नी बड़ी खुशी के साथ चली गई।

जमीन्दार की पत्नी के जाते ही रामदीन अपनी औरत से बोला–"अरी! सुनो! हमारी क़िस्मत खुल गई है।"

इधर जमीन्दार की गाड़ी रामदीन की झोंपड़ी के आगे आकर जब रुकी, तभी से अड़ोस-पड़ोस के लोग उनकी बातचीत बड़ी उत्सुकता के साथ सुन रहे थे। वे अब रामदीन के पास आकर आश्चर्य प्रकट करते हुए बोले–"क्या तुम सचमुच इस झोंपड़ी को बेच दोगे?"

"अरे साहब! एक हज़ार रुपये मिल रहे हैं तो क्यों न बेचूंगा?" रामदीन ने उल्टा सवाल किया।

"अरे, तुम्हारी अक़्ल चरने गई है! तुमने यह भी सोचा है कि तुम्हारी इस पुरानी व टूटी-फूटी झोंपड़ी के लिए एक हज़ार रुपये क्यों दिये जा रहे हैं? इस झोंपड़ी से बहुत बड़ा लाभ न हो तो जमीन्दारिन इतने सारे रुपये क्यों लुटा देंगी? उन्हें यह मालूम हो गया होगा कि तुम्हारी झोंपड़ी के अन्दर कोई खज़ाना गड़ा हुआ है! तुम तो भोले और बुद्दू ठहरे! इसीलिए झट बेचने को तैयार हो गये हो? हमारी बात सुनो, तुम किसी भी दाम पर इस झोंपड़ी को मत बेचो, तुम्हीं खुद खोदकर उस खज़ाने को ले लो। कमबख़्त एक हज़ार रुपयों के लोभ में न पड़ो।" यों सब ने रामदीन को बेतुकी सलाहें दीं और वहाँ से चले गये।

ये बेतुकी सलाहें रामदीन को उचित प्रतीत हुईं। उसकी औरत ने भी पड़ोसियों की बातों में आकर कहा–"इन लोगों का

कहना सच मालूम होता है। हाल ही में जमीन्दारिन अपनी कन्या का विवाह भी करने जा रही है, ऐसी हालत में एक हज़ार रुपये खर्च करके यह झोंपड़ी क्यों खरीद लेगी? क्या इस झोंपड़ी में अपनी लड़की को थोड़े ही बिठाने वाली है?"

शाम को जब जमीन्दार का नौकर एक हज़ार रुपये लेकर रामदीन के घर पहुँचा, तब पति-पत्नी दोनों ने अपनी झोंपड़ी बेचने से इनकार किया।

उस दिन रात को लालटेन की रोशनी में रामदीन ने पिछवाड़े में स्थित केले के पौधों को उखाड़कर फेंक दिया, सारे पिछवाड़े को गहराई तक खोदा। झोंपड़ी के भीतर उसे कोई चीज़ दिखाई न दी, इस पर उसने झोंपड़ी की छत को हटाकर ढूंढ़ा, कहीं कोई चीज़ हाथ न लगी। इतने में सवेरा हो गया। रामदीन रुआँसे स्वर में बोला–"हमने बहुत बढ़िया सौदा हाथ से निकलने दिया है!"

"अब भी कुछ बिगड़ा नहीं, तुम तुरंत जाकर जमीन्दारिन से कह दो कि हम झोंपड़ी बेचने के लिए तैयार हैं। पाँच सौ भी दे, मान जाओ।" रामदीन की पत्नी ने सुझाया।

रामदीन जमीन्दार के घर चला गया, जमीन्दार की औरत से बोला–"मैंने मूर्खतावश लोगों की बेतुकी सलाहें मानकर झोंपड़ी के बेचने से इनकार किया है।

अब मैं बेचना चाहता हूँ। आप जो उचित समझें, सो दे दीजिए!"

जमीन्दारिन ने मुस्कुराकर जवाब दिया–"अब तुम्हारी झोंपड़ी मेरे लिए किस काम की? मैं अपना दाँव तो हार चुकी हूँ!" इन शब्दों के साथ उसने जमीन्दार तथा उसके बीच जो दाँव लगाया गया था, उसका वृत्तांत सुनाया।

असल में बात यह थी कि जमीन्दार की गाड़ी उसके दादा-परदादाओं के ज़माने की थी। जब से वह ससुराल आई है, तब से वह जमीन्दार द्वारा नई गाड़ी खरीदवाने की हर तरह से कोशिश कर रही है। मगर जमीन्दार के लिए अपनी पुरानी गाड़ी ही प्यारी है। उसके दादा-परदादा उसी में घूमे थे।

"पुरखों से चली आनेवाली चीज़ को कोई त्याग नहीं देता। आखिर हमारे गाँव के छोर पर स्थित केले के पौधोंवाला भी अपने दादा-परदादाओं के ज़माने की झोंपड़ी को छोड़ना नहीं चाहेगा। तुम चाहे, उसके क़द के बराबर धन का ढेर लगा दो, तब भी वह उस झोंपड़ी को नहीं बेचेगा।" जमीन्दार ने कहा था।

इस पर दोनों ने एक-एक हज़ार रुपयों का दाँव लगाया था। उस दाँव में जमीन्दारिन हार गई थी।

"मैंने इस हिम्मत और लगन के कारण तुम्हें एक हज़ार रुपये देने को मान लिया था कि मैं दाँव में जीत जाऊँगी और जमीन्दार के द्वारा नई गाड़ी खरीदवा दूंगी, तुमने गाँव के लोगों की बेतुकी सलाहें सुनकर मेरी आशाओं पर पानी फेर दिया। जानते हो? तुम्हें जिन लोगों ने झोंपड़ी न बेचने की सलाहें दीं, उन्हीं लोगों ने मेरे पास आकर अपनी झोंपड़ियाँ पाँच-पाँच सौ रुपयों में बेचने की इच्छा प्रकट की। तुम दूसरों की बातों में आकर नुक़सान पा चुके हो। अब भी सही, अपनी अक़्ल ठिकाने पर रखो।"

रामदीन लज्जित हो अपना सिर झुकाये उल्टे पाँव लौट आया।
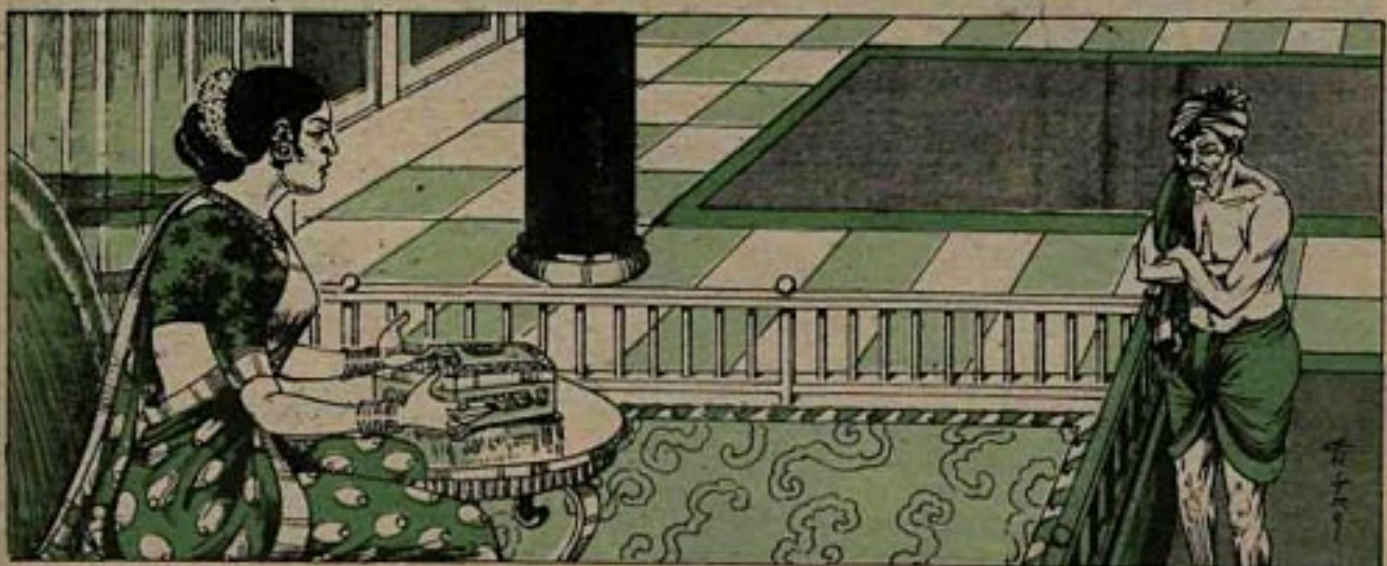
पानी का जादू

चन्द्रद्वीप का निवासी चन्द्र नामक प्रसिद्ध सौदागर तीन नौकाओं में ढाका के मखमल, मूर्शिदाबाद के दांत, कांसे के बर्तन तथा चन्दन की लकड़ी लादकर सात सौ नाविकों के साथ यव द्वीप के लिए चल पड़ा।

दो हफ़्ते तक यात्रा आराम से चली। तीसरे हफ़्ते में एक खाड़ी के निकट यात्रियों ने अनेक विचित्र दृश्य देखें। विवेकशील तथा ज्ञागवान चन्द्र सौदागर ने उनकी परवाह नहीं की। मगर मानव प्रकृति के अनुसार एक अद्भुत ने उसको अपनी ओर विशेष रूप से आकृष्ट किया। उसे पानी पर नृत्य करते सोने के दांतवाला एक सफ़ेद हाथी दिखाई दिया।

सौदागर ने अपने नाविकों को प्रेरणा दी–"तुम लोग किसी भी प्रकार से सही उस हाथी को पकड़ लो।"

सौदागर की नौकाएं हाथी को घेरने का प्रयत्न करने लगीं। मगर हाथी बचकर थोड़ी और दूर पर पानी पर नृत्य करते दिखाई दिया। चन्द्र सौदागर की नौकाएं पुनः उसके निकट पहुंचकर उसे पकड़ने को हुईं। हाथी इस बार भी अपने को बचाकर दूर पर दिखाई दिया। नौकाएँ हाथी को पकड़ने के प्रयत्न में रास्ता भटक कर बहुत ही दूर चली गयीं और विशाल समुद्र के मध्य भाग में प्रवेश कर गईं।

सूर्यास्त हो गया। समुद्र पर प्रचण्ड वायु उठी जो नौकाओं को खींच ले गई। आखिर नौकाएँ समुद्र की एक पथरीली मेंड़ से टकराकर चूर-चूर हो गईं। संपूर्ण माल के साथ सारे नाविक भी समुद्र में डूब गये।

टूटी नाव के तख़्तों के आधार पर चन्द्रसौदागर तथा छे नाविक भी अपन

श्री ए. सी. सरकार, जादूगर

प्राण बचाकर दो दिन बाद एक पहाड़ी तटीय प्रदेश में पहुँचे। भूख और थकावट के मारे परेशान वे सातों आदमी एक नारियल के पेड़ से जमीन पर गिरे नारियलों को फोड़कर अपनी भूख व प्यास मिटा पाये।

वे जिस टापू में पहुँचे, वह समुद्र तट से बहुत ही ऊँचाई पर था। चारों ओर फैले हुए पहाड़ सीधे थे जिससे उन्हें लाँघना कठिन था। सब ने टापू की परिक्रमा की, तब उन्हें मालूम हुआ कि पश्चिमी दिशा में पहाड़ों के बीच एक पतली घाटी है, मगर उस घाटी का एक प्रवेश द्वार था जहाँ पर कई सिपाही पहरे पर तैनात थे।

यात्रियों के वहाँ पर पहुँचते ही सिपाहियों ने उन्हें बंदी बनाया और घाटी के द्वार से उन्हें नगर के भीतर ले गये। चन्द्रसौदागर का दल सिपाहियों की भाषा जानता न था। नगर के मार्गों पर चलते चन्द्रसौदागर और उसके नाविक अत्यंत आश्चर्य चकित थे। क्योंकि उस नगर में सर्वत्र अपार समृद्धि झलक रही थी। सूर्यास्त तक सिपाहियों ने उन्हें कारागार में रखा।

दूसरे दिन सवेरे सिपाही उन्हें राज-दरबार में ले गये। चन्द्रसौदागर तथा उसके साथियों ने झुककर राजा को प्रणाम किया। इस पर राजा बहुत प्रसन्न हुआ।

राजा ने अपनी बोली में पूछा—"तुम लोग वास्तव में क्या चाहते हो?"

चन्द्रसौदागर ने अपनी बोली में जवाब दिया—"महाराज! आप की भाषा हम समझ नहीं पा रहे हैं।"

वे लोग उस देश की भाषा जानते न थे, इसलिए राजा ने संकेतों के द्वारा अनेक प्रश्न पूछे—चन्द्रसौदागर ने भी संकेतों के द्वारा ही उनका उत्तर दिया। राजा ने उसका अर्थ यह लगाया कि चन्द्रसौदागर तथा उसके नाविक समुद्र में दुर्घटना के शिकार हो गये हैं और वे उस

नगर में अपना स्थाई निवास बनाना चाहते हैं।

राजा ने एक गिलास तथा एक जल कलश मँगाकर गिलास को जल से भर दिया। इसके बाद उन सातों यात्रियों से सात अंगूठियाँ लेकर उन्हें गिलास में डाल दिया, जिस से गिलास का जल बहकर चारों तरफ़ निकल गया। इसका भाव था कि लोगों से नगर भर गया है, नये लोगों को भी नगर में बसाने से अशांति फैल जाएगी।

यह समाचार विदित होने पर चन्द्र सौदागर का दल निराश हो गया। उनकी हालत पर रहम खाकर राजा ने उन्हें केवल दो दिन तक नगर में रहने की अनुमति दी।

इसके बाद नाविकों में से एक ने चन्द्र सौदागर को सुझाया—"मालिक! हमारे द्वारा एक नौका बनाने तक इस नगर में रहने की अनुमति पाने का कोई उपाय कीजिए।"

"मैं भी यही सोच रहा हूँ।" ये शब्द कहकर सौदागर अपने अनुचरों के साथ नगर में घूमने निकल पड़ा। वे चलते-चलते एक दूकान के सामने रुक गये। उस दूकान में मकान बनवाने के लिए आवश्यक अनेक प्रकार के उपकरण बेचे जाते थे।

उसको देखते ही सौदागर के मन में एक विचार आया।

दूसरे ही क्षण उसने अपनी उंगलियों में स्थित तीन अंगूठियों में से एक को गिरवी रखकर एक लंबी नलीवाली छोटी कीप और एक कांच का गिलास खरीदा।

"ये किसलिए साहब?" सौदागर के अनुचरों में से एक ने पूछा।

"देखते रह जाओ।" सौदागर ने कहा।

इसके बाद वह सौदागर अपने अनुचरों के साथ राजदरबार में पहुँचा। उसके हाथ में कांच का गिलास मात्र था। मगर कीप उसकी जेब में छिपाई गई थी।

उसने राजा को प्रणाम किया और बगल के कमरे में थोड़ी देर ठहरने की अनुमति प्राप्त की। वह एक पात्र में पानी लेकर अपने अनुचरों के साथ उस कमरे में पहुँचा। थोड़ी देर बाद वह उस कमरे से दरबार में आया और राजा से उस कमरे के भीतर आने की प्रार्थना की।

राजा के भीतर प्रवेश करते ही चन्द्र सौदागर ने अपनी तथा अपने अनुचरों की सात अंगूठियाँ हाथ में ले लीं, तब राजा को पानी से भरा काँच का लोटा दिखाया। इसके बाद एक एक करके सातों अंगूठियों को गिलास में छोड़ दिया। तब एक बूंद पानी भी नहीं छलका। गिलास में भरे हुए पानी ने सातों अंगूठियों को जगह दी।

राजा ने प्रसन्नतापूर्वक सौदागर का कंधा थपथपाया। एक अंगूठी सौदागर को पुरस्कार के रूप में देकर राजा ने मंत्री के कान में कुछ कहा। मंत्री ने इशारे तथा अभिनय के द्वारा सौदागर तथा उसके अनुचरों की समझ में आने लायक़ ढंग से बताया कि वे लोग जितने दिन चाहे, उतने दिन उस राज्य में निश्चित रह सकते हैं।

चन्द्रसौदागर का इंद्रजाल उसे तथा उनके अनुचरों के लिए इस प्रकार काम आया।

सौदागर ने कमरे के भीतर क्या किया? उसने पहले गिलास के किनारों को एक कपड़े से इस तरह पोंछ दिया जिससे गिलास के छोरों पर गीलापन न हो। तब कीप की मदद से गिलास को पानी से भर दिया, भरते समय इस बात का ध्यान रखा कि गिलास के छोर गीले न हो। यही उसके इंद्रजाल का रहस्य था। गिलास के छोर ज़रा भी गीले होते तो पानी छलककर गिलास के छोरों पर से बाहर बह जाता। इसी प्रकार अंगूठियों को गिलास में डालते वक़्त भी इस बात की सावधानी रखी कि पानी छलककर गिलास के छोर गीले न हो।

१६१. प्राचीन श्मशान के अवशेष

क्रिमिया प्रायदीप के ईशान दिशा में गत वर्ष (१९७४ के मध्य) एक प्राचीन श्मशान का पता लगा। उसे नगैचिन्स्की टीला कहते हैं। उसमें कांसे का आईना, चांदी के बर्तन, सोने के कंगण, माला इत्यादि चीजें प्राप्त हुई। दो हजार वर्ष पूर्व नर्मातिया ग्रीक शिल्पियों ने इन्हें तैयार किया था। यह समझा जाता है कि रत्न खचित वे सारे आभूषण एक नर्मातिया रानी के थे। उन आभूषणों पर के शिल्प को इस चित्र में देख सकते हैं।

दो शिष्य

प्राचीन काल की बात है। अजीकर्त नामक एक मुनि के यहाँ दो शिष्य थे। उनमें शुनश्शेप अत्यंत क्रोधी था। वह अपने सहपाठी रोहित के साथ सदा-सर्वदा झगड़ा किया करता था। इसलिए रोहित जहाँ तक हो सके, शुनश्शेप से दूर रहने का प्रयत्न किया करता था।

अजीकर्त ने भांप लिया कि पहले स्नेहभाव से रहनेवाले उसके शिष्य क्रमशः एक दूसरे के दूर होते जा रहे हैं। एक दिन मुनि ने रोहित से पूछा—"तुम दोनों मित्रभाव से नहीं रहते, तुम शुनश्शेप से एक वर्ष बड़े हो, इसीलिए मैं तुम से ही पूछता हूँ!"

"गुरुदेव! शुनश्शेप बड़ा क्रोधी है! दोनों सदा साथ रहें तो हर बात पर कोई न कोई झगड़ा उठ खड़ा होता है। मैं इस डर से उससे दूर रहता हूँ कि उसका क्रोध मुझ पर भी अपना प्रभाव न डाले!" रोहित ने जवाब दिया।

"उसे यह मालूम हो जाय तो पर्याप्त है कि तुम उसके प्रति सद्भावना रखते हो! यदि यह बात सच हो कि उसका क्रोध तुम पर अपना प्रभाव डालनेवाला है तो तुम्हारा शांत स्वभाव भी उस पर अपना प्रभाव क्यों नहीं डाल सकता? इस प्रकार उसका क्रोध शांत हो सकता है! इसके प्रमाण स्वरूप मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ, सुनो!" इन शब्दों के साथ अजीकर्त मुनि ने यों कहा:

"एक गाँव में रमानंद तथा सीमानंद नामक दो मित्र थे। वे दोनों किसान थे। वे गाँव के लोगों की अनेक प्रकार से सहायता करते हुए उनके अत्यंत प्रिय बने हुए थे। उन्हें सभी लोग जोड़ा दोस्त या मित्रद्वय कहकर पुकारते थे।

बिमल गर्ग

थोड़े दिन बाद छोटी-सी बात को लेकर दोनों मित्रों के बीच मनमुटाव पैदा हुआ। धीरे धीरे वह शत्रुता में परिणत हो गया। आखिर उन मित्रों ने परस्पर देखना तथा बात करना तक बंद किया।

इससे कुछ हद तक दोनों का नुक़सान हुआ। वे पहले की भांति गांववालों की सहायता नहीं कर पा रहे थे। मित्रता के लिए समर्थन की ज़रूरत नहीं होती, पर शत्रुता के लिए ज़रूरत होती है। इसलिए वे दोनों गांव के लोगों के बीच एक दूसरे की निंदा किया करते थे। इस वजह से पुनः उनके बीच मित्रता पैदा होने का मौक़ा तक जाता रहा।

उस हालत में गुरुमूर्ति नामक एक बुज़ुर्ग ने उन दोनों के बीच पुनः मित्रता पैदा करने के वास्ते एक उपाय किया।

गांव में यह समाचार फैल गया कि गांव के छोर पर एक मण्डप में एक योगी आया हुआ है, जो लोगों की मानसिक चिंताएं दूर करता है और शारीरिक बीमारियां भी दूर करता है। कई लोगों ने जाकर योगी के दर्शन किये। रमानंद ने भी जाकर उसको देखा।

योगी ने रमानंद से कहा–"तुम्हारे भीतर एक बड़ी विशेषता है। तुम प्रेम

के साथ जिसका आलिंगन करोगे, वह बड़ा धनी बन जाएगा। उसके द्वारा तुम्हारा भी हित होगा। मगर बात यह है कि तुम जिसके साथ आलिंगन करोगे, वह तुम्हारा उपकार करनेवाला भी हो। यह बात सोच-समझकर आलिंगन करो।"

इसके उपरांत रमानंद ने सोचा कि वह किसके साथ आलिंगन करे। मगर उसकी दृष्टि में कोई योग्य व्यक्ति दिखाई न दिया। सीमानंद के साथ उसकी दुश्मनी हो गई है, मगर वास्तव में वही सब से योग्य व्यक्ति है।

इस बीच सीमानंद भी योगी को देखने गया। योगी ने उसको समझाया–"यदि

कोई प्रेम के साथ तुम्हारा आलिंगन करेगा तो उस हालत में तुम्हारे सारे कष्ट दूर हो जायेंगे और तुम धनी बन जाओगे! मगर तुम किसी के साथ आलिंगन करोगे तो वह तुम्हारी आँखों के सामने ही मर जाएगा।"

अपने साथ कौन आलिंगन करेगा, इस ख्याल से सीमानंद तथा किसके साथ आलिंगन करना उचित होगा, इस विचार से रमानंद सारा गांव चक्कर काटने लगे। इस कारण वे बराबर एक दूसरे से मिलने लगे।

अनेक बार रमानंद को सामने से गुजरते देख क्रोधी सीमानंद ने सोचा– "यह दुष्ट मर जाएगा, तभी मेरे साथ आलिंगन करनेवाला निकल आएगा।" यों सोचते उसने रमानंद के साथ आलिंगन किया। रमानंद ने सोचा कि योगी ने सीमानंद को भी वे ही बातें बताई होंगी जो बातें उसे बताई हैं, उसने अत्यंत स्नेह एवं प्रेम के साथ सीमानंद का आलिंगन किया।

इसके बाद दोनों ने अपने मन की बात बताई तो उन्हें पता चला कि योगी ने दोनों को भिन्न प्रकार की बातें बताई हैं। इस पर दोनों योगी के पास पहुँचे।

सीमानंद ने योगी से निवेदन किया– "मैंने दुर्भाव से रमानंद के साथ आलिंगन करके उसको मौत का शिकार बनाया है, आप कृपया किसी भी प्रकार से सही, उसको बचाइए।"

"तुम डरो मत! तुम पहले जैसे उसके साथ मैत्रीपूर्वक रहोगे तो उसका कोई बुरा न होगा। तुम दोनों को पुनः मिलाने के लिए ही मैंने यह उपाय किया है।" इन शब्दों के साथ गुरुमूर्ति ने अपना नकली वेष हटाया।

इसके बाद रमानंद तथा सीमानंद मैत्रीपूर्वक रहने लगे।

यह कहानी सुनकर रोहित ने कहा– "मैं आइंदा शुनश्शेप के साथ मैत्रीपूर्वक रहूँगा।"

रत्नहार

सुंदरपुर का राजा माधव शासन कार्यों में अत्यंत दक्ष और दयालू था। उसके दो रानियाँ थीं। एक बार माधव एक विदेशी जौहरी के यहाँ एक मूल्यवान रत्नहार को देख मुग्ध हुआ और उसने जौहरी को मुंह मांगा दाम देकर खरीदा, उसे अपनी बड़ी रानी को उपहार में दिया। इस से छोटी रानी के दिल को धक्का लगा। मगर वह प्रकट रूप में कुछ कह न सकी। इस हार का समाचार आसपास के सभी देशों में फैल गया।

राजा माधव के मंत्री का नाम त्रिनाथ था। उसके एक मात्र पुत्री थी : वह गूंगी थी, इसलिए युक्त वयस्का होने पर भी उसका विवाह हो नहीं पाया था। इस चिंता से मंत्री परेशान था।

एक बार पड़ोसी राज्य का मंत्री सपरिवार अचानक त्रिनाथ के यहाँ आ धमका। उसने एकांत में त्रिनाथ से कहा– "मैं एक शर्त पर आपकी कन्या का विवाह अपने पुत्र के साथ करने के लिए तैयार होकर आया हूँ। आपके राज्य की बड़ी रानी के पास जो क़ीमती रत्नहार है, उसे हमें देना होगा।"

त्रिनाथ ने पूछा–"यह क्या! रानी का रत्नहार मुझे कैसे प्राप्त होगा?"

"यह सब मैं नहीं जानता, मगर उस हार के न देने पर आपकी कन्या के साथ मैं अपने पुत्र का विवाह करने को तैयार नहीं हूँ।" पड़ोसी राज्य का मंत्री अपने देश को लौटते हुए बोला।

मंत्री त्रिनाथ अत्यंत विश्वासपात्र था। उस दिन रात को त्रिनाथ बातचीत के सिलेसिले में अपनी पत्नी से बोला– "पड़ोसी देश का मंत्री केवल रत्नहार के वास्ते ही हमारी गूंगी लड़की के साथ

पद्माकर पांडेय

विवाह करने को तैयार है। भले ही हमारी कन्या का विवाह न हो, पर मैं राजद्रोह नहीं कर सकता।"

त्रिनाथ जब ये बातें अपनी पत्नी से कह रहा था तब वेश बदल कर घूमनेवाले राजा ने बाहर से सारी बातें सुन लीं। राजा ने निश्चय किया कि किसी भी तरह से सही मंत्री की पुत्री का विवाह संपन्न करना है, तब उसने मंत्री के घर में प्रवेश किया।

आधी रात्रि के वक़्त भीतर आये हुए व्यक्ति को देख त्रिनाथ चकित रह गया। उसने पूछा—"तुम कौन हो?"

"सच बताना हो तो मैं एक डाकू हूँ। आप के घर में चोरी करने के ख़्याल से आया। मगर बाहर से मैंने आप दोनों की बातचीत सुन ली। मैं समझ सका कि आप अपनी कन्या के विवाह को लेकर कैसे दुखी हैं। आप इस संबंध को हाथ से जाने न दे। मैं किसी न किसी प्रकार से रानीजी का रत्नहार लाकर आप को सौंप दूंगा।" राजा ने कहा।

"नहीं, नहीं, मैं किसी भी हालत में इसे स्वीकार नहीं कर सकता।" त्रिनाथ ने जवाब दिया।

"आप जल्दबाजी में आकर ऐसा निर्णय मत कीजिए। चोरी तो आप नहीं कर रहे हैं, मैं करनेवाला हूँ। यह भी मैं आप के हित के लिए करूँगा, अपने स्वार्थ के लिए नहीं।" राजा ने कहा।

त्रिनाथ की पत्नी ने अपने पति से कहा—"आप मान जाइए, कन्या की शादी हो जाने के बाद हम स्वयं राजा को सारा समाचार सुनाकर इस अपराध का दण्ड भोग लेंगे।"

बड़ी मुश्किल से त्रिनाथ ने मान लिया।

दूसरे दिन राजा ने एक कुशल सुनार को बुला भेजा, उसको एक गुप्त कक्ष में रखकर उसके द्वारा एक सप्ताह के भीतर ठीक रत्नहार जैसा एक नक़ली हार बनवाया और उसको बढ़िया पुरस्कार देकर भेज दिया। इसके बाद वेष बदल

कर राजा मंत्री के घर पहुँचा। वह हार मंत्री के हाथ देकर बोला–"अब आप अपनी कन्या का विवाह संपन्न कीजिए।"

मंत्री की पुत्री का विवाह निर्विघ्न संपन्न हुआ। राजा ने स्वयं जाकर वधू-वरों को बढ़िया उपहार दिये, आशीर्वाद भी दिया। फिर बड़ी प्रसन्नतापूर्वक अपने महल को लौट आये।

इसके बाद बड़ी रानी ने राजा को अपना रत्नहार दिखाते हुए कहा–"महाराज! इस हार के रत्नों में वह चमक नहीं है जो पहले थी!"

राजा ने हार की जांच करके जान लिया कि वह असली नहीं बल्कि नक़ली हार है। उसे संदेह हुआ कि भूल से उसी ने असली हार को मंत्री के हाथ तो सौंप न दिया है! इसलिए उस रात को राजा ने एक चोर का वेष बनाकर अपने कुछ सिपाहियों को भी वैसे ही वेष बनाने का आदेश दिया और पड़ोसी देश के मंत्री के परिवार के निवास पर हमला किया।

इस हमले में जो गहने प्राप्त हुए, उन में रत्नहार भी था। मगर वह भी नक़ली हार था। पर राजा की समझ में न आया कि इसका रहस्य क्या है!

दूसरे दिन सवेरे मंत्री त्रिनाथ ने राजा की सेवा में पहुँचकर निवेदन किया–

"महाराज! सुना है कि हमारे संबंधी के निवास पर चोरों ने हमला करके सभी गहनों को लूट लिया है! इस से भी भयंकर घटना तो यह है कि मैंने एक लुटेरे के द्वारा बड़ी रानी का रत्नहार प्राप्त करके उसे अपने दामाद को दहेज़ में दिया है। इसके लिए मुझे उचित दण्ड दीजिए।"

राजा ने मंत्री से कहा–"आपके द्वारा कोई चोरी नहीं हुई है, आपके संबंधी जो गहने खो चुके हैं, उन्हें वापस दिलाने का मैं प्रयत्न करूँगा।" यों समझा कर राजा ने मंत्री को भेज दिया।

इसके बाद राजा ने सुनार को बुला कर पूछा–"तुमने मुझे जब नक़ली रत्नहार

दिया, उसके साथ असली हार नहीं दिया, बल्कि एक और नक़ली हार दिया है। ऐसा क्यों हुआ है? साफ़-साफ़ न बताओगे तो तुम्हें फांसी की सजा दी जाएगी।"

सुनार ने राजा के चरणों पर गिरकर कहा-"महाराज, मुझे क्षमा कर दीजिएगा। यह बात सच है कि मैंने दो नक़ली हार बनाये हैं। अंत:पुर से छोटी रानीजी की दासी ने आकर मुझे बहुत-सा धन दिया और एक और नक़ली हार तैयार करने तथा इस बात को गुप्त रखने की बात भी बताई। इसके बाद मैंने सोचा कि तीनों हार जिस पेटी में मैंने रखे थे, उसमें से वह नक़ली हार ले गई है। यह सोचकर मैंने बाक़ी दोनों हार आप को सौंप दियें हैं।"

राजा ने सुनार को विदा करके छोटी रानी की दासी मंजरी को बुला भेजा और डांटा, तब वह जान के डर से कांपते हुए बोली कि उसने स्वर्णकार को दगा देकर असली रत्नहार को छोटी रानी के हाथ कैसे पहुँचा दिया है! राजा ने झुंझलाकर छोटी रानी को बुला भेजा और पूछा-"तुमने यह गड़बड़ी क्यों की है?"

"महाराज! क्या नारियाँ गहनों तथा साड़ियों के प्रति ज़्यादा मोह नहीं रखतीं? आप ने बड़ी रानी को मूल्यवान हार दिया, पर मुझे कुछ नहीं दिया। क्या ऐसा हार पहनने की इच्छा मेरे मन में भी न होगी? क्या मैं यह बात आप से पूछ सकती थी? आप को तो मेरे मन की थाह लेनी चाहिए थी? इसलिए मैंने छोटा-सा षड़यंत्र करके असली रत्नहार को प्राप्त कर लिया है। यदि मैंने जो कुछ किया, वह अपराध हो तो मुझे क्षमा कर दीजिए।" छोटी रानी ने बताया।

राजा विवेकशील था। इसलिए अपनी भूल को स्वीकार करके उसी सुनार के द्वारा छोटी रानी के लिए भी बढ़िया और असली रत्नहार तैयार करवा लिया। उस दिन से राजा दोनों रानियों के प्रति बिना पक्षपात के व्यवहार करने लगा।

न्याय की मजूरी

मंगाराम के पास चार गज की एक चौकोर शिलापाटी थी। उसने उसे चार समान पाटियाँ बनाने के ख़्याल से गरीबदास नामक एक राज-मजदूर को बुलाकर चार रुपये मजूरी तै की।

गरीबदास ने दिन भर मेहनत करके बड़ी पाटी से एक छोटी पाटी निकाली। वह दूसरे दिन काम पर न आया, इस पर मंगाराम ने भिखारीदास नामक एक और राजमजदूर को काम पर लगाया। भिखारीदास ने भी दिन भर काम करके तीन पाटियाँ निकालीं।

जब मंगाराम दोनों को मजूरी देने लगा, तब गरीबदास को एक रुपया और भिखारीदास को तीन रुपये देने को हुआ।

"मालिक! हम दोनों ने एक-एक दिन काम किया है, इसलिए प्रत्येक को दो-दो रुपये दीजिए।" गरीबदास ने कहा।

"तब तो अन्याय होगा न! भिखारीदास ने तीन टुकड़े किये और तुम ने एक ही।" मंगाराम ने कहा।

रास्ते चलनेवाले एक व्यक्ति ने ये बातें सुनकर कहा–"मंगारामजी! दोनों ने बराबर ही काम किया है! एक ने एक कोना काट दिया तो दूसरे ने दूसरा कोना। दोनों को बराबर मजूरी दीजिए।"

असली बात मंगाराम की समझ में आ गई और उसने हर एक को दो दो रुपये दिये।

सच्चा न्याय

एक गाँव में पूनमसिंह नामक एक गरीब किसान था। उसके यहाँ सिर्फ़ एक एकड़ ज़मीन थी। वह उसी गाँव के किशनलाल नामक एक व्यापारी के ऋणी हो गया और कर्ज चुकाने के लिए एक एकड़ जमीन दे दी।

अब पूनमसिंह के पास एक दुधारू गाय मात्र बच गई थी। पूनम गाय का दूध किशनलाल को बेचकर उसी की दुकान से आटा-दाल खरीदकर अपने दिन गुज़ार देता था।

थोड़े दिन बाद किशनलाल के मन में गाय को हड़पने की सूझी। किशनलाल का विचार था कि गाय उसकी हो गई तो पूनम को आटा-दाल देने से बच सकता है।

एक दिन मूसलधार पानी बरसा। पूनमसिंह अपनी गाय को चराने के लिए बाहर न ले पाया। उसको दिन भर झोंपड़ी में बांधे रखा। घर पर खिलाने के लिए उसके यहाँ सूखी घास तक न थी। इस चिंता से वह रात भर जागता रहा कि भूखी गाय शायद दूसरे दिन दूध न दे।

उस रात को पगहा तोड़कर गाय बाहर चली गई और किशनलाल के खेत को चरने लगी। पर पूनम को यह बात मालूम न थी।

दूसरे दिन सवेरे किशनलाल चार बुज़ुर्गों को साथ लेकर पूनमसिंह के घर पहुँचा। उसने डांटकर पूछा—"तुम्हारी गाय मेरे खेत को चर चुकी है। मैंने मेहनत करके जो फ़सल पैदा की, वह सारी की सारी नष्ट हो गई है। इसका तुम क्या जवाब दोगे?"

पूनमसिंह ने बुज़ुर्गों से पूछा तो सब ने यही कहा कि किशनलाल का कहना सच है।

संतोष कुमार

किशनलाल ने रोब जमाते हुए कहा– "मेरे खेत की फ़सल पांच-दस की नहीं, दो सौ रुपयों की नष्ट हो गई है!"

इस पर बुजुर्गों ने पूनमसिंह को समझाया–"तुम अपनी गाय किशनलाल को दे दो तो उसका नुक़सान भर जाएगा।" किशनलाल का भी ठीक यही विचार था।

मगर पूनमसिंह अगर किशनलाल को गाय देगा तो उसकी जीविका मारी जाएगी। या तो उसे भीख माँगना पड़ेगा या भूखों मरना होगा। इसलिए पूनम ने अपनी गाय किशनलाल को देने से इनकार किया।

किशनलाल ने गाँव के मुखिये के पास जाकर शिकायत की। मुखिये ने सारी बातें सुनकर फ़ैसला सुनाया–"पूनम! तुम्हारी असावधानी से ही किशनलाल की फ़सल नष्ट हो गई है! इसलिए उसका नुक़सान भरने के लिए बदले में तुम्हें अपनी गाय किशनलाल को देना ही उचित होगा।"

गाँव के लोगों ने भी बताया कि यह फ़ैसला न्याय संगत है!

लाचार होकर पूनमसिंह ने अपनी गाय किशनलाल के हाथ सौंप दी और वह घोर चिंता में डूब गया। वह घर तो लौट आया, पर बहुत ही सोच व विचारने पर पूनम को लगा कि उसके साथ सरासर अन्याय ही हुआ है। उस देश का न्यायाधिकारी न्याय के लिए प्रसिद्ध

है। इसलिए पूनमसिंह ने सोचा कि न्यायाधिकारी की सेवा में पहुँचकर शिकायत करनी चाहिए। वहां पर शायद उसे न्याय मिले।

न्यायाधिकारी ने पूनमसिंह की सारी बातें सुनीं; इसके बाद पूनम के परिवार का सारा समाचार जान लिया, तब शांत स्वर में कहा–"पूनम, तुम्हारे प्रति न्याय तो नहीं हुआ, बल्कि अन्याय हुआ है। तुम्हारी फ़रियाद पर विचार करूंगा। मैं कल किशनलाल तथा उसके गवाहों को बुला भेजूंगा। तुम कल फिर अदालत में आ जाओ।"

दूसरे दिन सभी लोग न्यायालय में हाजिर हुए। न्यायाधिकारी ने सारी हालत जानकर कहा–"किशनलालजी! यह बात सही है कि पूनमसिंह की गाय ने तुम्हारी फ़सल नष्ट करके तुम्हें नुक़सान पहुँचाया है। मगर तुम्हारे इस नुक़सान का कारण पूनमसिंह की असावधानी नहीं। तुम्हारे नुक़सान के वास्तविक कारण तो दो हैं। एक तो वह पनहा है जिसे तुम ने पूनमसिंह को बेचा था। वह मजबूत न था, तिस पर भी उसे तुम ने पूनम को दुगुने दाम पर बेचकर अन्यायपूर्वक लाभार्जन किया, दूसरा कारण यह कि तुम ने अपने खेत के लिए बाड़ा नहीं बनवाया। बाड़ा न हो तो ऐसे खेत में कोई भी जानवर प्रवेश करके फ़सल को नष्ट कर सकता है। इसलिए अपने नुक़सान के लिए सब प्रकार से तुम्हीं जिम्मेवार हो! तुम ने पूनम से जो दर लिया उसके लिए यदि मजबूत पनहा दिये होते तो गाय उसको तोड़ न पाती। तुम ने अपने खेत पर बाड़ा लगाया होता तो वह गाय किसी बंजर में चरती। तुम्हारी इन भूलों के लिए पूनम को अपनी गाय देना सरासर अन्याय है। इसलिए तुम उस गाय को पूनम को लौटा दो।"

चाहे जो हो, आखिर पूनम को न्याय मिल गया।

परिवर्तन

सौ साल पहले की बात है। श्रीपुर नामक गाँव में राघवराय नाम का एक ज़मीदार था। वह अत्यंत उदार और दाता था। किसी को विपदा में देख उसका दिल पसीज उठता और उनकी सहायता करता। राघवराय की देखा देखी गाँव के अन्य धनी भी उदार हो गये थे।

उसी गाँव में रतनलाल नाम का एक व्यापारी था। वह अव्वल दर्जे का कंजूस था। अपने पास जो बड़ी संपत्ति थी, उससे संतुष्ट न होकर ब्याज पर उधार देता, लोगों को दिन दहाड़े लूटता।

एक बार आंधी और वर्षा के कारण सारी फ़सलें नष्ट हो गई। अकाल का नगा नाच होने लगा। गरीब लोग भूखों मरने लगे। इसे देख राघवराय ने सब को अपने घर बुलाया, अपना सारा धन उनमें बांट दिया।

मगर राघवराय का धन थोड़े ही दिनों में खर्च हो गया। सब ने फिर उनसे निवेदन किया–"महानुभाव! आप ने जो धन दिया, वह खतम हो गया है। थोड़ी सहायता और कीजिए।"

ज़मीन्दार की समझ में कुछ न आया। उसने गाँव के अन्य धनवानों के पास जाकर दान मांगा, पर सब ने यही कहा–"हम सब से बड़ा धनवान तो रतनलाल है। आप उससे जाकर क्यों नहीं मांगते?"

ज़मीन्दार के मन में एक विचार आया। उसने रतनलाल के पास जाकर कहा–"सेठ साहब, मुझे पांच हज़ार रुपये की सख्त जरूरत आ पड़ी है। मगर आप उन रुपयों के साथ इस आशय का एक चिट लिखकर दीजिए कि आप वह धन मुझे दान में दे रहे हैं, मैं शाम तक आप का धन वापस करूंगा।"

राजीव सक्सेना

रतनलाल ने पूछा–"शाम तक धन लेकर क्या करनेवाले हैं?"

ज़मीन्दार ने मुस्कुराकर कहा–"सेठ साहब! सब लोग जानते हैं कि आप कभी दान नहीं देते। ऐसी हालत में लोगों को यह मालूम हो जाय कि आप ने पांच हज़ार रुपये दान दिये हैं, तो बाक़ी लोग आप के साथ होड़ लगाकर दान देंगे। लोग भूखों मर रहे हैं। शाम तक आप का धन लौटाकर अन्य लोगों से जो धन प्राप्त होगा, वही मैं गरीबों में बांट दूंगा। धन खर्च किये बिना सहायता करने का पुण्य-फल आप को प्राप्त होगा।"

"अच्छी बात है! ऐसा कीजिए! मगर शाम तक मेरा धन लौटायेंगे न?" इन शब्दों के साथ रतनलाल ने पांच हज़ार रुपये तथा उस धन को दान करने का एक चिट भी लिखकर दे दिया।

उस चिट को दिखाकर ज़मीन्दार ने अन्य धनवानों से खूब धन वसूल किया और गरीबों को पहुंचा दिया। शाम को सेठ का वह धन उसके हाथ सौंपते हुए बोला–"सेठजी, जैसे मैंने सोचा था, आप के धन की वजह से बहुत सारा दान वसूल हो गया है। कृपया आप अपना धन वापस ले लीजिए।"

लेकिन सेठ ने अपना धन वापस नहीं लिया। ज़मीन्दार को बड़ा आश्चर्य हुआ।

"सेठजी! आप अपना धन वापस क्यों नही लेते?" ज़मीन्दार ने पूछा।

"ज़मीन्दार साहब! आप नहीं जानते, मेरे धन देने की बात सुनकर कितने लोगों ने आकर मेरी तारीफ़ की! मैंने ऐसा आनंद अपनी ज़िंदगी भर में कभी नहीं पाया। दान करनेवाला व्यक्ति ही दान करने से होनेवाले आनंद को जान सकता है! आज से मैं भी दान किया करूंगा। लीजिए, ये और पांच हज़ार ले जाकर अनाथों में दान कीजिए।" इन शब्दों के साथ रतनलाल ने पांच हज़ार और ज़मीन्दार के हाथ थमा दिये।

रतनलाल के इस हृदय-परिवर्तन को देख ज़मीन्दार विस्मय में आ गया।

सुग्रीव का विश्वास था कि अन्य वानरों की अपेक्षा हनुमान ही अधिक कार्य साधन की शक्ति रखता है, इसलिए हनुमान से कहा :

"हे महान वीर हनुमान! तुम वायु, जल, पृथ्वी तथा ऊर्ध्व आकाश में भी संचार कर सकनेवाले हो। तुम से अपरिचित कोई लोक, समुद्र अथवा पर्वत नहीं है, तुम वायुदेव जैसे वेग व गमन रखते हो। पृथ्वी पर तो तुम से बढ़कर शक्तिशाली कोई अन्य प्राणी नहीं है। इसलिए सीतादेवीजी को पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न तुम्हारे द्वारा ही संभव हो सकता है। बल, बुद्धि, देश व काल के अनुरूप व्यवहार करने की क्षमता तथा पराक्रम तुम में जैसे भरे पड़े हैं, अन्यों में नहीं हैं।"

हनुमान के साथ सुग्रीव का वार्तालाप सुनकर रामचन्द्रजी ने भांप लिया कि सीतान्वेषण का भार सुग्रीग हनुमान को सौंप रहा है।

हनुमान की शक्ति एवं सामर्थ्य से सुग्रीव परिचित होगा, इसलिए रामचन्द्रजी की सारी आशाएँ हनुमान पर केंद्रित हुई। उन्होंने अपने नामांकित मुद्रिका को हनुमान के हाथ देकर कहा—"हे वानर श्रेष्ठ हनुमान! तुम इस मुद्रिका को सीताजी को दिखाओगे तो वह भयभीत न होंगी। तुम पर संदेह भी न करेंगी। साथ ही यह भी जान लेंगी कि तुम मेरे यहाँ

८. स्वयंप्रभा की कहानी

से गये हुए हो! सुग्रीव की बातों से मुझे ऐसा लगता है कि तुम्हारे द्वारा कार्यसाधन होगा।"

हनुमान ने मुद्रिका को ग्रहण कर सिर पर हाथ रखे, प्रणाम किया। फिर रामचन्द्रजी के चरणों पर प्रणाम करके उनसे विदा लेकर रवाना हुआ। रामचन्द्रजी ने पुनः हनुमान से कहा—"हनुमान, मेरी बातों पर ध्यान देकर सुनो। मैं तुम्हारी शक्ति पर विश्वास किये बैठा हूँ। तुम यथाशक्ति प्रयत्न करो और सीताजी को पाने का मार्ग ढूंढ़ो।"

इसके बाद वानरों के दल टिड्डी दल जैसे सभी दिशाओं में चले पड़े। वापस लौटने की एक मास की अवधि निर्धारित की गई।

वानरों के चले जाने के बाद राम और लक्ष्मण प्रस्त्रवण पर्वत पर एक गुफ़ा में चले गये और वहाँ पर वे उनकी वापसी का इंतज़ार करते रह गये।

विनत का वृंद पूर्वी दिशा में, सुषेण का दल पश्चिम की ओर तथा कुछ अन्य लोग उत्तरी दिशा में गये, दक्षिण की ओर हनुमान, तार, अंगद इत्यादि चल पड़े।

सब को सभी दिशाओं में भेजकर अपने वचन-पालन करने पर सुग्रीव ने प्रसन्नता का अनुभव किया, तब वह पहले की अपेक्षा अधिक सुखमय जीवन व्यतीत करने लगा।

सुग्रीव के द्वारा भेजे गये वानरों ने बड़ी लगन के साथ सीताजी के अन्वेषण का कार्य प्रारंभ किया। वे दिन भर सरोवर, नदी, झाड़ियों, पहाड़ों तथा गुफ़ाओं की खोज करते, रात के होते ही वे सब वानर एक स्थान पर इकट्ठे हो पेड़ों के नीचे रात बिता देते थे। इस प्रकार पूर्व, पश्चिम तथा उत्तर की दिशा में गये हुए वानरों के दल एक मास की अवधि के पूर्ण होते ही लौट आये और उन्होंने सुग्रीव को सूचित किया कि कहीं

भी सीताजी का पता न चला। उस वक़्त सुग्रीव प्रस्त्रण पर्वत पर रामचन्द्रजी के निकट बैठा हुआ था।

फिर भी दक्षिण की ओर गया हुआ दल लौटा न था, अतः अब भी उनकी आशा बनी रही। उन्हें समाचार ऐसा मिला था कि रावण सीताजी को लेकर दक्षिणी दिशा में ही गया था। इस कारण हनुमान का सीताजी का पता लगाकर लौटने की संभावना थी।

इस बीच हनुमान इत्यादि सीताजी की खोज करते विन्ध्याचल के निकट पहुँचे। वह एक विशाल प्रदेश था। वहाँ पर अनेक गुफाएँ थीं। असंख्य प्रकार की चोटियाँ भी थीं। जंगल थे, दुर्गम नदियाँ थीं, ऊँचे वृक्ष भी थे। फल व कंद-मूल खाते वानर उस प्रदेश में सीताजी की खोज करते आगे बढ़े।

एक स्थान पर एक दम शून्य छाया हुआ था। वहाँ के पेड़ बिलकुल सूखकर ठूंठ बने हुए थे। नदियों में पानी न था; सारी नदियाँ एकदम सूख गई थीं। लता, पुष्प व कंद तक वहाँ पर उपलब्ध न थे। किसी भी जाति के जानवर व पक्षी तक न थे। वह सारा प्रदेश अत्यंत भयंकर लग रहा था। बियाबान जैसा प्रतीत हो रहा था।

उस वन में महर्षि कंडु रहा करता था। उनका तपोबल जितना अधिक था, उनका क्रोध भी उतना ही ज्यादा था। उसके सोलह वर्ष का पुत्र अचानक ही अकाल मृत्यु को प्राप्त हुआ था। इस पर उस महर्षि ने क्रोध में आकर उस वन को शाप देकर मरुभूमि बना दिया था। वानर उस निर्जन प्रदेश में भी सीताजी को खोजने लगे।

इस अन्वेषण में आगे बढ़ते जाकर वे सब एक भयंकर जंगल में पहुँचे। वहाँ पर उन्हें एक राक्षस दिखाई दिया। उस महाकाय राक्षस को देखते ही वानर ताल ठोंक कर उसके साथ युद्ध करने के लिए तैयार हो गये।
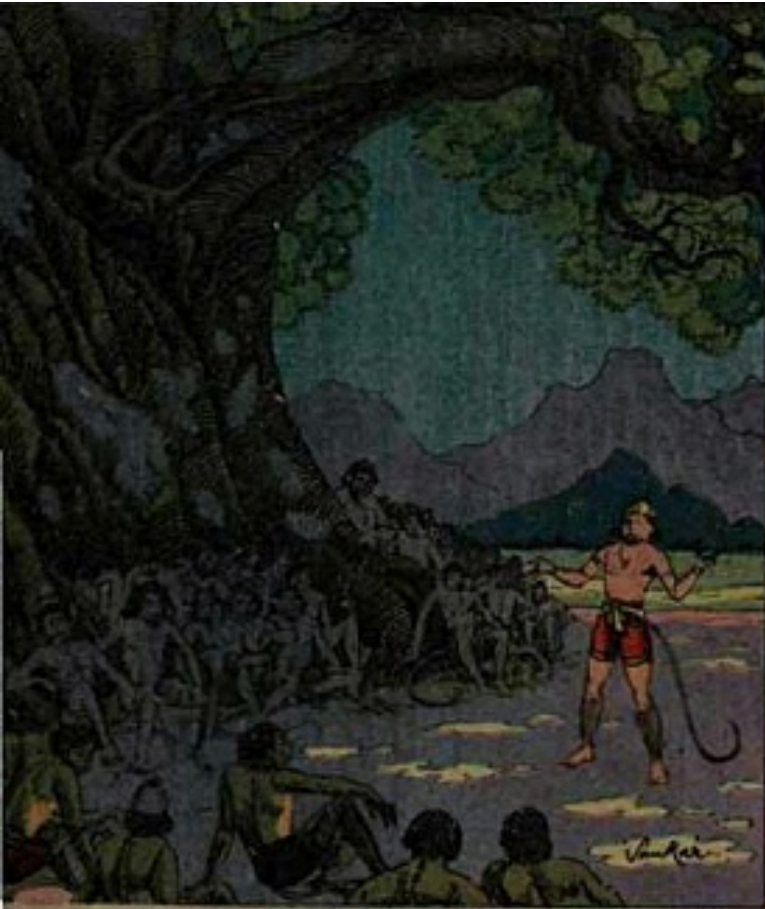
वानरों को देखते ही राक्षस ने मुट्ठी बाँध कर उन्हें ललकारा–"मैं तुम सब को अभी मार देता हूँ! तुम सब मरने के लिए तैयार हो जाओ। भागने की कोशिश मत करो। मेरे हाथों से आज तुम लोग किसी भी हालत में बच नहीं सकते। तुम्हारी मौत ही तुम लोगों को इस ओर खींच लाई है।" अंगद ने सोचा कि वही रावण होगा और उसके मस्तक पर ज़ोर का प्रहार किया। एक ही आघात पर राक्षस खून उगलते जमीन पर गिरकर दम तोड़ बैठा।

वानरों ने सोचा कि रावण मर गया है, सीताजी उसकी गुफा में होंगी. उसकी सारी गुफा को खोज डाला। वहाँ पर सीताजी दिखाई न दीं। वानरों ने उसके समीप में स्थित एक और गुफा में पहुँचकर ढूंढ़ा। सारा जंगल छान डाला, तब भी सीताजी को न पाकर वे लोग निराश में आ गये और एक पेड़ के नीचे आकर बैठ गये।

उस समय अंगद ने वानरों से कहा–"हमने इतने दिनों से अनेक जंगल, पर्वत, नदियाँ, गुफाओं को भी बड़ी मेहनत के साथ खोज डाला, फिर भी हमें न सीताजी का कहीं पता चला और न सीताजी को उठा ले जानेवाले रावण का ही। सुग्रीवे की आज्ञा अत्यंत भयंकर है। हम निराश में आकर कोई कार्य न कर सकेंगे। फिर एक बार तुम लोग अपना उत्साह बटोरकर इस जंगल को ढूंढो। तुम सब को इस वक़्त आराम करना उचित नहीं; अथवा कोई इससे अच्छा उपाय हो तो बता दो।"

गंधमादन ने भी अंगद के विचारों का ज़ोरदार शब्दों में समर्थन किया। इस प्र वानर अपनी थकावट को भूलकर पुनः विन्ध्याचल के जंगलों में सीताजी की खोज करने लगे। चाँदी के पर्वत जैसे एक पहाड़ पर चढ़कर देखा, वहाँ पर भी सीताजी को देख न पाये। उस पहाड़

की चोटी पर से उतर आये, थोड़ी देर विश्राम करके फिर से ढूंढने के काम में लग गये। विन्ध्याचल पर वे सीताजी को खोज ही रहे थे, तभी सुग्रीव की दी गई मियाद बीत गयी।

वानर एक एक प्रदेश को ढूंढते विन्ध्याचल की नैऋत दिशा के छोर पर पहुँचे। वहाँ पर पहुँचनेवाले वानर प्रमुखों में हनुमान, गज, गवाक्ष, गवय, शरभ, गंधमादन, मेंद, द्विविद, सुषेण, जांबवान, नळ, युवराज अँगद तथा तार थे। उन सब के मन में अपने प्रयत्न को सफ़ल देखने का दृढ़ संकल्प भरा हुआ था।

वे प्रत्येक गुफा को ढूंढते एक बड़े सुरंग के पास पहुँचे। वह एक ऋक्ष बिल था। उसका निर्माण मय ने किया था। उसके द्वार पर लताएँ इस तरह फैल गई थीं कि उसके भीतर जाना संभव न था। सारी लताएँ द्वार के मार्ग को रोके हुई थीं। वानर सब भूख-प्यास से तड़प रहे थे। कहीं पानी तक न था, उल्टे वे थककर चूर हो गये थे।

मगर वानरों ने देखा कि ऋक्ष बिल से क्रौंच पक्षी, हंस, चक्रवाक इत्यादि जल पक्षी बाहर उड़ते आ रहे हैं। इस दृश्य को देख हनुमान आदि आश्चर्य में आ गये और वे बड़ी आशा को लेकर उस बिल के निकट पहुँचे।

पर्वत तथा जंगलों से संबंधित अधिक जानकारी रखने वाले हनुमान ने अन्य
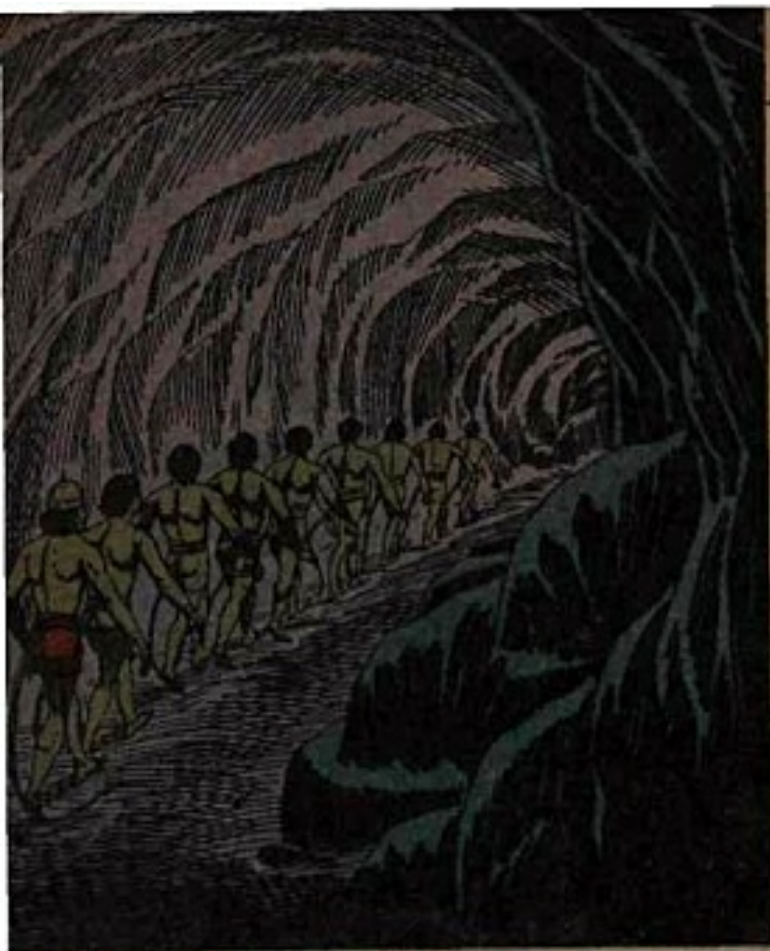
वानरों से यों कहा : "देखिए! इस गुफा के मुख से जल पक्षी उड़ते बाहर आ रहे हैं। उसके द्वार पर फैले पेड़ और लताएँ हरी भरी हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि गुफा के भीतर कोई कुआँ या तालाब ज़रूर होगा। हम लोग प्यास के मारे थके-माँदे हैं। हम अन्दर जाकर पहले अपनी प्यास और थकान मिटायेंगे, तब हम फिर सीताजी की खोज करेंगे।"

हनुमान के मुंह से ये शब्द निकलते ही वानर सुरंग के भीतर पहुँचे। गुफा के भीतर गहरा अंधकार फैला हुआ था। वानरों को इस बात का बिलकुल पता तक न था कि वे कहाँ जा रहे हैं, फिर भी मार्ग टटोलते हुए आगे बढ़ते गये। काफी दूर जाने पर अंधकार की जगह रोशनी दिखाई दी। इसके बाद उन्हें अत्यंत सुंदर प्रदेश नज़र आया। वहाँ पर अत्यंत प्रकाशमान कांचन वृक्ष, साल वृक्ष, ताड़ के पेड़, पुन्नाग वृक्ष, अशोक वृक्ष इत्यादि दीख पड़े। कुछ पेड़ों में फल व फूल शोभायमान थे। वहाँ के एक कमल ताल में स्वर्णिम कमल, सोने की मछलियाँ और सोने के कछुए भी दीख पड़े।

उस प्रदेश में विशाल भवन थे। उनकी खिड़कियाँ सोने की थीं। भवनों की छतें सोने व चाँदी से निर्मित थीं। उन महलों में मोतियों के तोरण झूल रहे थे, मणियों से वे महल अलंकृत थे।

उस प्रदेश में वानरों को प्रवाल की कांतिवाले वृक्षों पर फल और फूल दिखाई दिये। तरह तरह के मधु, रत्न जड़ित आसन व वाहन भी उन्हें दिखाई दिये, जहाँ-तहाँ सोने, चाँदी तथा कांसे के पात्र ढेरों पड़े थे। इसी भाँति चन्दन, धूप, फल, कंद, मूल, पेय, शहद, वस्त्र, कंबल, तरह-तरह के चमड़े, सोने के ढेर भी दिखाई पड़े।

वानरों ने उस प्रदेश की खोज करते एक जगह एक नारी को देखा। वह हिरण का चर्म धारण किये तपस्या कर रही थी।

वह नारी कांतिमान थी, उसे देख वानरों के मन में एक साथ आश्चर्य एवं भय भी पैदा हुए।

हनुमान ने उसके निकट जाकर पूछा– "देवी! तुम कौन हो? यह सुरंग किसका है?" इसके उपरांत हाथ जोड़कर उस नारी को प्रणाम किया और अपना परिचय यों दिया–"हम लोग बहुत दूर चलकर थके-मांदे हैं, भूख-प्यास से तड़पते हुए पानी व अन्न की खोज में अंधेरे से भरे इस सुरंग में घुस आये हैं। मगर यहां की इन अद्‌भुत वस्तुओं को देखने से हमें लगता है कि यह किसी राक्षस का जादू है। ये स्वर्णिम वृक्ष, सोने व चांदी के ये ढेर किसके हैं? इस तड़ाग के स्वर्णिम कमलों की सृष्टि किसने की? सोने के कछुए व मछलियों की कल्पना किसने की? यह सब हमें एक अजीब पहेली जैसा लगता है। सविस्तार हमें बता दो।"

इस पर उस तपस्विनी ने हनुमान से यों कहा: "मय नामक एक जबर्दस्त दानव बहुत समय पूर्व यहां रहा करता था। वह दानवों का विश्वकर्मा है। उसके मायाजाल से ही वह स्वर्णिम वृक्षों का वन निर्मित हो गया है। उसने भारी तपस्या करके यह समस्त धन ब्रह्मा के द्वारा वरदान के रूप में प्राप्त कर लिया है। बहुत समय पूर्व वह हेमा नामक अप्सरा के साथ इस प्रदेश में सुखपूर्वक

रहा करता था, इस पर इंद्र ने क्रुद्ध हो मय पर अपने वज्रायुध का प्रहार किया। इसके उपरांत ब्रह्मा ने यह प्रदेश हेमा को प्रदान किया। मैं मेरु सावर्निकी पुत्री हूँ। मेरा नाम स्वयंप्रभा है। मैं हेमा के इस प्रदेश की रक्षा करते यहाँ पर रह रही हूँ। हेमा मेरी सखी है। वह संगीत तथा नृत्य में प्रवीण है। उसने मुझे जो वर दिया, उसकी वजह से कोई भी मुझे हरा नहीं सकता। तुम लोग किस कारण से इस प्रदेश में घूम रहे हो? इस दुर्लभ प्रदेश में तुम लोग आयें ही क्यों? पेहले तुम लोग फल खाओ, तब अपनी प्यास बुझाकर सविस्तार अपना वृत्तांत सुनाओ।"

जब वानरों ने फल खाकर अपनी प्यास बुझायी, तब हनुमान ने सारा वृत्तांत स्वयंप्रभा को सुनाया। अंत में उसने कहा–"माई, तुम ने अन्न-जल देकर हमारे प्राण बचाये, इसके बदले में हम तुम्हारा कौन-सा उपकार कर सकते हैं?"

"मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। तुम लोगों से मुझे किसी प्रकार के प्रत्युपकार की आवश्यकता नहीं!" स्वयंप्रभा ने उत्तर दिया।

"माई, सुग्रीव ने हमें जो अवधि निर्द्धारित की, वह अभी बीत गई है। इस सुरंग से हमारे बाहर निकलने का उपाय बताओ। यदि हम यहाँ फंस गये तो सीतान्वेषण का हमारा कार्य रुक जाएगा।" हनुमान ने कहा।

इस पर स्वयंप्रभा ने कहा–"मैं अपनी तपोशक्ति के द्वारा तुम सब को बाहर भेज देती हूँ। तुम सब अपनी आँखें मूंद लो।"

वानरों ने अपनी आँखें मूंद लीं। दूसरे ही क्षण वे सब सुरंग के बाहर थे। तब उनके साथ आई हुई स्वयंप्रभा ने वानरों को लक्षित करके कहा–"यह विन्ध पर्वत है। सामने समुद्र है। तुम सब का शुभ हो!" यों कहकर वह पुनः सुरंग के भीतर चली गई।

सत्त्वा, भिजनसंपन्न,
स्स्वानुक्रोशो, जितेन्द्रियः,
कृतज्ञ, स्सत्यवादी च,
राजा लोके महीयते ॥ १ ॥

[बलवान, उत्तम वंश में उत्पन्न, दीनों के प्रति दया रखनेवाले, इंद्रिय निग्रह तथा सत्य वचन कहनेवाले राजा की सारा जगत प्रशंसा करता है ।]

यस्तु राजा स्थितो धर्मे
मित्राणा मुपकारिणाम्
मिथ्या प्रतिज्ञाम् कुरुते
को नृशंसतर स्ततः ॥ २ ॥

[अधर्मी तथा अपने प्रति उपकार करनेवालों के साथ असत्य शपथ लेनेवाला राजा महान पापी होता है ।]

अमित्राणाम् वधे युक्तो
मित्रणाम् संग्रहे रतः
त्रिवर्गफल भुक्तातु
राजा धर्मेण युज्यते ॥ ३ ॥

[जो राजा शत्रुओं का वध करते, मित्रों की संख्या बढ़ाते धर्म, अर्थ एवं काम का अनुभव करता है, वह राजा राजधर्म का अच्छा पालन कर सकता है ।]

राजधर्म

Photo by Anant Desai

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

क्यों हम लड़ते हैं दिन-रात ?

प्रेषक :
मनोज नेवटिया

Photo by Anant Desai
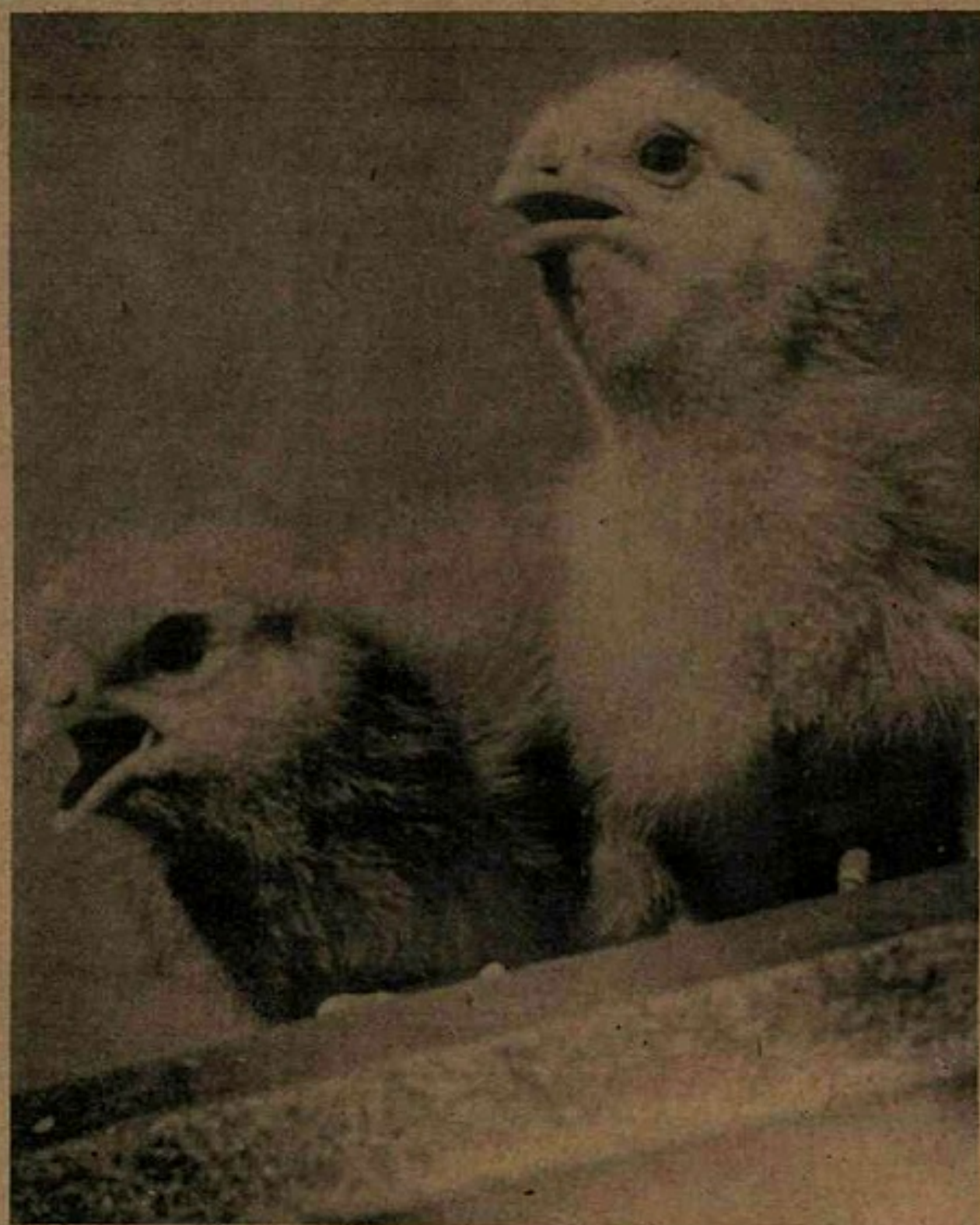
१०२, नार्कल डांगा मेन रोड,
कलकत्ता - ५४

आओ करें कुछ काम की बात!

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ जून १० तक प्राप्त होनी चाहिए. सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अगस्त के अंक में प्रकाशित की जायेंगी !

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2&3, Arcot Road, Madras-600 026. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

Photo by : Mrs. DAMYANTI PATEL

CONSUMER

DAMAMA (Hindi) JUNE 1975 Regd. No. M. 5452

मित्र-भेद